ध्यान की व्याख्या शब्दों द्वारा नहीं हो सकती। अनुभव द्वारा इसका आनंद लिया जा सकता है। शब्दों का काम है अनुभव के लिए प्रेरित करना।

माईंड एंड बॉडी रिसर्च सेंटर
का उद्देश्य है
मन तथा तन के छिपे हुए पहलुओं को
प्रकाश में लाना।

इसी लेखनी से अन्य पुस्तकें

मानसिक सफलता कैसे ?
हम सब और यह
जिंदाबाद मुर्दाबाद
पश्चिम के तीन रंग
यौन-व्यवहार अनुशीलन
कामभाव की नयी व्याख्या
भारत के पर्वतीय भ्रमण स्थल संपादित
श्रीमदभगवदगीता जेबी साईज संक्षिप्त भावानुवाद

ध्यान योग

कुछ सरल विधियां

तन और मन को स्वस्थ और सुखी बनाने वाली
सुगम ध्यान साधना-विधिया

लेखक '
दयानन्द वर्मा

ध्यान योग कुछ सरल विधियां (अध्यात्म)
दयानन्द वर्मा

प्रकाशक
माईंड एंड बॉडी रिसर्च सेंटर (प्रकाशन विभाग)
W-21, ग्रेटर कैलाश पार्ट-1, नयी दिल्ली-110048

मुद्रक
दुर्गा मुद्रणालय, सुभाष पार्क एक्सटेंशन
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

प्रथम मुद्रण 1989

मूल्य 45 रुपये

DHYANA YOGA Kuchh Sarala Vidhiyan Spirituality
By Verma Dayanand First Print 1989 Rs 45/-
ISBN 81-900079 1 2

क्रम

पुस्तक के विषय में

पतजलिकृत यागसूत्रो मे 'अष्टाग योग' की चर्चा हुई है। अष्टाग योग के आरभिक पाच अग हैं यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार। इन पाच अगो को बहिरग' अर्थात योग के बाहरी अग कहा गया है।

अतिम तीन अग है—धारणा, ध्यान और समाधि। इन्हे आभ्यतर अर्थात् योग के भीतरी अग कहा गया है। बाहरी अग भीतरी अगो के लिए आधार-भूमि का निर्माण करते हैं।

सामान्य जन अष्टाग योग की साधना को कठिन मानते हैं। उनके लिए अलग अलग मत-सम्प्रदायो मे 'ध्यान' की अन्य विधिया भी बताई गई हैं। स्वय श्रीकृष्ण ने गीता मे अलग अलग प्रकृति के व्यक्तियो के लिए अलग-अलग प्रकार की योग-साधनाए बताई हैं। भक्तियोग, कर्मयोग तथा ज्ञानयोग की साधनाए व्यक्ति भेद के अनुसार अलग अलग प्रकार की साधनाए है।

प्रस्तुत पुस्तक मे एक ओर 'बहिरग योग' से सबधित कुछ सूत्रो की आधुनिक व्याख्या प्रस्तुत की गई है, दूसरी ओर अन्य मत सप्रदायो मे प्रचलित ध्यान की सुगम साधनाए भी बताई गई हैं।

कोई भी व्यक्ति साधना की इन विधियो मे स अपनी प्रवत्ति के अनुसार कोई विधि चुनकर अपने मन और तन को सुखी बना सकता है।

पुस्तक के परिशिष्ट भाग मे 'स्वाध्याय के सूत्र' शीर्षक से कुछ विचार-कण सकलित किए गए हैं। ये विचारकण दृष्टिकोण को व्यापक बनाते हैं और व्यक्ति को आत्मविश्लेषण के लिए प्रेरित करते हैं। आत्मविश्लेषण करने वाले

व्यक्ति का डावाडोल मन स्थिर होता है और उसके लिए ध्यान-साधना सुगम होती है।

आज के भाग-दौड़ से भरे वातावरण में यह पुस्तक यदि व्यक्ति को अपने भीतर झाकने के लिए प्रेरित कर सके तो इस पुस्तक का उद्देश्य सफल हो जाएगा।

W-21, ग्रेटर कैलाश पार्ट-1
नयी दिल्ली-110048

—दयानन्द वर्मा

ध्यानयोग
किसके लिए कितनी मात्रा ?

'कला' कला के लिए या कला
जीवन के लिए ?
साहित्य और कला के क्षेत्र का यह
ज्वलन्त प्रश्न ध्यान के क्षेत्र मे भी
उठता रहता है। उत्तर अगली
पंक्तियों मे प्रस्तुत है।

ध्यानयोग के वारे मे सामान्य व्यक्ति की मान्यता यह है कि यह साधना सामान्य व्यक्ति के बस की नही है। इस साधना मे डूबने वाले को घर-वार, जीविका-व्यापार सभी कुछ छोडना पडता है।

ध्यानयोग के विषय मे आम आदमी के इस मत से यह प्रकट होता है कि इस क्षेत्र के सिद्धजनो ने योग का सामान्यजनोपयोगी स्वरूप प्रचारित नही होने दिया है।

ध्यानयोग सबधी भ्रातिया

इस भ्रम का कारण पुराणो मे कथित ऐसी कहानिया हैं जिनके अनुसार तपस्या मे लीन एक टाग पर खडे योगी का शरीर सूखकर वृक्ष की एक शाखा जैसा वन गया या समाधिस्थ योगी के शरीर पर चीटियो ने वल्मीक (वाविया) वना दी। इस प्रकार की धारणाओ का फल यह हुआ है कि हमारा पूरा समाज 'योगी' और 'भोगी' इन दो भागो मे वटकर रह गया है और इन दोनो के मध्य सवाद की स्थिति नही रही है।

अव पश्चिमी देशो मे 'योग' के प्रति रुचि वढी है। इसका फल यह हुआ है कि अव 'योग' का नाम आधुनिक समझे जाने वाले लोगो की जवान पर आने लगा है किंतु वे योग के एक अग

'आसन' को ही 'योग' मान रहे है। योग वस्तुत मन की साधना है। 'आसन' योग-साधना का एक अग वेशक है किंतु केवल आसन को ही योग मान लेना ठीक नही है।

ध्यानयोग का उद्देश्य मन के व्यापारो के प्रति सजग होना है।

योग की सामान्य से उच्चतम तक की अनेक कोटिया है। सामान्य योग के अभ्यास से नित्यप्रति के कार्यो के प्रति हमारी कुशलता बढ जाती है। योग की उच्चतर अवस्था मे नित्यप्रति की क्रियाओ के प्रति हमारी विमुखता बढ जाती है। सामान्य और विशिष्ट की अवस्था के ये भेद जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे हम देखते हैं।

खेल के मैदान का एक उदाहरण लेते है। सामान्य जनो के लिए दौडने, कूदने, फादने तथा तैरने के खेल तन को स्वस्थ रखने के साधन होते है। इस प्रकार के व्यायाम से खिलाडी की दिनचर्या मे विशेष अतर दिखाई नही देता। किंतु जो व्यक्ति खेलो मे विशिष्टता प्राप्त करते हे यानी खेलो की राष्ट्रीय या अतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओ मे भाग लेते है, उनके लिए ये खेल मात्र तन को स्वस्थ रखने के सावन नही रहते अपितु कीर्ति पाने के माध्यम बन जाते है।

प्रत्येक क्षेत्र की उच्च स्थिति तपस्या चाहती है

प्रत्येक क्षेत्र मे उच्च स्थिति तक पहुचने के लिए साधक को उस क्षेत्र के नियमो का पालन करना पडता है। ध्यानयोग की साधना के लिए यम-नियम आदि अग योगशास्त्रो मे बताए गए है।

खेल-प्रतियोगिताओ मे विशिष्ट स्थिति प्राप्त करने के गुर उन क्षेत्रो के गुरुजन बताते है। उनके अनुसार तैराकी की विश्व-चैपियनशिप जीतने के लिए प्रतियोगी को जैसे अभ्यास-आहार की जरूरत होती है, दौड की प्रतियोगिता मे आगे निकलने के इच्छुक

को उससे भिन्न प्रकार के आहार-अभ्यास की जरूरत रहती है। ऐसे प्रतियोगियों के अभ्यास शिविरों का यदि हम अवलोकन करें तो हम पाते हैं कि वहां का वातावरण भी एक प्रकार के तपोवन जैसा ही है। उनकी साधना का क्षेत्र अलग होने के कारण हम उनकी तपस्या की विधि में भिन्नता देखते हैं।

ध्यान जीवन के लिए या जीवन ध्यान के लिए ?

जब हम 'जीवन ध्यान के लिए' कहते हैं उस समय हमारा आशय ध्यानयोग की उच्चतम अवस्था से होता है। उस अवस्था में योगी पूर्ण ब्रह्म से एकाकार की स्थिति में पहुंच जाता है। यह स्थिति सामान्य भाषा में 'समाधि' है। यह अवस्था योग को साध्य और जीवन को साधन बनाए बिना प्राप्त नहीं हो सकती।

जब हम 'ध्यान जीवन के लिए' कहते हैं तो हमारे सामने व्यावहारिक जीवन मुख्य होता है। ध्यानयोग एक मानसिक व्यायाम के रूप में हमारे जीवन को सफल और सुखद बनाने का साधन बन जाता है।

ध्यानयोग का लाभ

जो व्यक्ति अब तक शरीर को सब कुछ समझकर मन की अपार शक्ति से अनजान रहा है, वह जानना चाहेगा कि मानसिक व्यायाम का लाभ क्या है।

हम जो कुछ भी कर रहे हैं, या करना चाहते हैं, उसका लाभ जानने की इच्छा उठना स्वाभाविक है। परलोक के लाभ बताने वाले अनेक ग्रंथ हैं किंतु सामान्य जन तो अपने किए का तुरत लाभ लेना चाहता है। उधार के बड़े लाभ की अपेक्षा तुरत का छोटा लाभ उसके लिए अधिक प्रेरणादायक होता है।

ध्यानयोग का तत्काल लाभ यह है कि हम जो कुछ भी कर

रहे है, यदि अपने इस काय मे हम एकाग्र है तो उसे अधिक कुशलता से कर सकते है। ससार के सफल व्यक्ति, चाहे वे कला के क्षेत्र के हो या विज्ञान अथवा अन्य किसी क्षेत्र के, उनकी सफलता का सूत्र उनकी एकाग्रता मे छिपा है।

एकाग्रता के प्रकार

एकाग्रता दो प्रकार की होती है—

1 सहज,

2 अर्जित।

जिन विषयो मे या व्यक्तियो मे हमारी रुचि या आसक्ति होती है, उनके प्रति हमारी एकाग्रता सहज हो जाती है। यदि हमारी एकाग्रता का ध्येय समाजोपयोगी न हो तो उसका कुफल हमे किसी-न किसी रूप मे भुगतना पडता है। वह कुफल शासन की ओर से दड के रूप मे मिले या समाज की ओर से अपयश के रूप मे।

अत सहजप्राप्त एकाग्रता पर निभर होना पर्याप्त नही। किसी ऐसी विधि की आवश्यकता है, जिससे हम अपनी इच्छा-शक्ति द्वारा वाछित विषय पर एकाग्र हो सके। ऐसी विधि से प्राप्त होने वाली एकाग्रता अर्जित कही जाएगी। योग एकाग्र होने की विधि सुझाता है।

ध्यानयोग का अन्य लाभ

योग की दूसरी उपलब्धि है मन की शात अवस्था।

मानसिक शाति का हमारे जीवन मे विशेष महत्त्व है। उदाहरणत, शात अवस्था मे किए गए हमारे निणय विवेकपूण होते हैं। शात मन वाले व्यक्ति को दुविधाओ से उबरने की शक्ति सहज ही प्राप्त हो जाती है। शात व्यक्ति मे उतावलापन घट जाता है और ठहराव बढ जाता है। विषम स्थिति मे वह घबराता नही है। उसे प्रयत्न का फल यदि इच्छानुसार न मिले तो भी वह विक्षिप्त

नही होता।

शात अवस्था और एकाग्रता, ये दोनो अवस्थाए एक-दूसरे पर निर्भर हैं। एकाग्र मन को शाति स्वत प्राप्त हो जाती है। अशात अवस्था मे हम एकाग्र हो नही सकते। किसी भी विषय मे हमारी एकाग्रता का होना यह स्पष्ट करता है कि हम वहा शात अवस्था की सीढी से होकर पहुचे हैं।

परम एकाग्रता की अवस्था समाधि है। इस अवस्था तक पहुचने के उपाय योगशास्त्रो मे बताए गए है किंतु यहा हम सामान्य जीवन बिताने वाले व्यक्ति के लिए ध्यानयोग की चर्चा कर रहे हैं। वह अवस्था है मन की शाति। मन की शाति पाने के अनेक उपाय है। उनमे से कुछ की चर्चा आगे की जानी है। ●

मन को
प्रदूषण-मुक्त कैसे करें ?

इस प्रश्न का उत्तर लेखक ने 'विश्व-योग-सम्मेलन 1986' के अवसर पर एक भाषण के रूप मे दिया था। उसी भाषण के कुछ अंश यहां लेख के रूप मे प्रस्तुत हैं।

प्रदूषणो की चर्चा आज जोरो पर है।

कारें, बसें और फैक्टरिया निरंतर धुआ उगल रही हैं। इससे हवा मे प्रदूषण बढ रहा है।

शहरो का मैला, कूडा-करकट नदियो मे बहाया जा रहा है, इससे जल प्रदूषित हो रहा है।

तीसरा भयानक प्रदूषण है शोर का।

शोर का अर्थ है असगत और अनियमित आवाजे। वैज्ञानिको का कहना है कि एक विशेष मात्रा से अधिक ऊचा शोर आदमी मे तनाव लाता है। उसे चिडचिडा बनाता है।

इन सभी प्रकार के प्रदूषणो से वातावरण को मुक्त करने के लिए भारत सरकार का एक पूरा मत्रालय जुटा हुआ है। उस मत्रालय का नाम ही 'पर्यावरण मत्रालय' रखा गया है। विश्व की अन्य सरकारें भी पर्यावरण को शुद्ध करने के काम को प्राथमिकता दे रही है।

इन सभी प्रदूषणों से चिंताजनक एक प्रदूषण और है किंतु उसकी ओर किसी सरकार का ध्यान नही जा रहा है। वह प्रदूषण है, आदमी के अदर का अर्थात् मन का प्रदूषण।

विश्व मे आज भय और तनाव का जो वातावरण दिखाई देता

है उसका कारण व्यक्ति का प्रदूषित मन है।

यह प्रदूषण जब सरकार चलाने वालो के मन मे होता है तो राष्ट्रो के बीच युद्ध छिडते है। एटमबमो के ढेर ऊचे उठते हैं। यह प्रदूषण यदि सरकार से बाहर के व्यक्ति के मन मे उठता है तो उसका नाम उग्रवाद हो जाता है, आतकवाद हो जाता है। और यही प्रदूषण जब बाहर की बजाय भीतर का रुख करता है तो उसी का नाम तनाव हो जाता है।

योगदर्शन के अनुसार मन के प्रदूषण

योगदशन मे मन के प्रदूषणो को क्लेश कहा गया है।[1]

क्लेश का अथ है 'दु ख, पीडा'।

योगसूत्रकार पतजलि ने सभी दु खो को पाच वर्गों मे बाटा है। वे पाचो वग ही पाच प्रकार के क्लेश है। वे क्लेश हैं—

1 **अविद्या,**
2 **अस्मिता,**
3 **राग,**
4 **द्वेष,**
5 **अभिनिवेश।**

ये पाचो क्लेश ही मन के सभी प्रदूषणो के मूल कारण हैं।

योगसूत्रो की नयी व्याख्या

इन क्लेशो के अगो, उपागो पर विचार करने से पहले योग-सूत्रो का रचना-काल समझ ले।

योगसूत्रो की रचना उस युग मे हुई थी जब प्रिंटिंग प्रेस नहीं होते थे। ज्ञान या तो हस्तलिखित पुस्तको के रूप मे सुरक्षित था या उसे कठस्थ कर लिया जाता था।

---

1 साधन पाद 3 से 9

वडे ग्रथो को कठस्थ करना कठिन था इसलिए प्रत्येक विषय के प्रमुख मुद्दो को सूत्रो का सक्षिप्त रूप दिया जाता था। वे सूत्र एक प्रकार के सकेत (Clues) होते थे। अवसर और युग के अनुसार विद्वान् जन उन सूत्रो की व्याख्या करके पुराने ज्ञान को फिर से नया बना लेते थे। फिर से उन्हे पुस्तको मे सुरक्षित कर लेते थे।

देश, काल और सदर्भ के अनुसार शब्दो के अर्थ बदलते रहते है। यही कारण है कि शब्दो के पुराने प्रयोग बाद के युग वालो की समझ मे नही आते।

अपने ही युग का उदाहरण लेते है। 'रुपया' शब्द हमारे यहा उस समय प्रचलित हुआ जब छोटा सिक्का 'पैसा' ताबे का होता था। बडा सिक्का 'अशर्फी' सोने का था। मध्य का सिक्का 'रूपे' का अर्थात् चादी का होता था। 'रूपे' से 'रुपया' प्रचलित हुआ।

बाद मे हमने यह भी देखा कि रुपया चादी की बजाय गिलट का बनने लगा और करेंसी नोट के रूप मे कागज पर भी छपने लगा लेकिन नाम फिर भी रुपया ही रहा।

तनिक सोचिए कि हजारो साल बाद कोई व्यक्ति हमारे आज के करेंसी नोट पर 'रुपया' छपा देखेगा तो वह 'रूपे' के साथ 'रुपये' का सबध कैसे जोडेगा ?

एक अवस्था और भी। हम दिल्ली वाले बिहार वासी को 'पुरबिया' कहते हैं। कलकत्ता का वासी उस बिहारी को 'पच्छमिया' कहता है।

इसी प्रकार की बहुत सी अवस्थाओ का विवेचन जैन शास्त्रो मे हुआ है। उन्ही का दिया हुआ शब्द **'स्याद्वाद'** हर स्थिति को व्यापक तौर पर देखने की दृष्टि देता है।

शब्द और अर्थ की इस भूमिका के साथ आज की शब्दावली मे हम 'क्लेशो' की व्याख्या कर रहे हैं।

पहला क्लेश है अविद्या।

अविद्या अज्ञान को कहते हैं। जितने भी क्लेश हैं, वे सब अज्ञान से उपजते हैं। इसलिए 'अविद्या' को सभी क्लेशो का मूल कारण माना गया है।

दूसरा क्लेश है अस्मिता।

जब तक व्यक्ति स्वय को परम शक्ति का निमित्त या साधन मानता रहता है, तब तक वह इस क्लेश से मुक्त रहता है। जब उसे अपने 'कर्त्ता' होने का गर्व हो जाता है तो 'अस्मिता' नामक क्लेश उपजता है। आज के युग मे प्रचलित शब्द अहम् (Ego) अस्मिता का ही नया नाम है।

राष्ट्रो के विभाजन के पीछे किसी-न-किसी की आहत अस्मिता होती है। राजनैतिक और धार्मिक सस्थाओ की स्थापना के पीछे भी अस्मिता ही काम करती है। अतत इन सस्थाओ का विघटन भी अस्मिता के ही कारण होता है। **अस्मिता जितनी अधिक सवेदनशील होती है, उस पर लगी चोट उतनी ही अधिक घातक होती है।**

तीसरी क्लेश **राग** है।

राग का प्रमुख अर्थ है 'सुख की अवस्था'। एक विशेष प्रकार के सुख को भोग लेने के बाद बार-बार उसी को भोगने की इच्छा मन मे उठती है। इस प्रकार राग हमे पराधीन बनाता है। 'राग' को इसीलिए क्लेश की श्रेणी मे रखा गया है।

चौथा क्लेश **द्वेष** है।

राग के मार्ग मे बाधा का आना द्वेष को जन्म देता है। क्रोध इसका प्रकट रूप है और इसके छद्म रूप अनेक है। उन छद्म रूपो की चर्चा हम आगे करेंगे।

पाचवा क्लेश **अभिनिवेश** है।

अभिनिवेश के बहुत से अर्थ है किंतु योगसूत्रो के व्याख्याकारो ने अभिनिवेश का अर्थ बताया है **मृत्यु का भय**। आधुनिक मनो-

विज्ञान मृत्यु को बडा आघात (Traûma) मानता है।

हमारे विचार से जितने प्रकार के अकारण भय (Phobias) है, वे सभी इसी क्लेश के वर्ग मे आते हैं। मृत्यु के भय को भी हम अकारण यानि 'फोबिया' मानते है। यह इसलिए कि हमारे यहा 'आत्मा की अमरता' स्वीकार की जा चुकी है।

इन पाचो क्लेशो मे से मुहावरे के रूप मे प्रचलित होने वाले क्लेश दो है। वे है—राग और द्वेष।

राग को मुख्यता मिलने का कारण यह है कि सभी प्रकार के दु ख राग के मार्ग मे बाधा आने से उपजते है।

द्वेष को इसलिए मुख्य क्लेश माना है कि यह 'क्रोध' पर आधारित भावना है। राग के बाद इसी भाव के रूप मन को सबसे अधिक झकझोरते है।

राग की व्याख्या

हर व्यक्ति के लिए 'राग' का अर्थात् सुख का साधन अलग होता है।

किसी के लिए धन और सपत्ति सुख का साधन है और किसी के लिए पद, ख्याति, सतान, अहभाव, प्रेमी या प्रेमिका को पाना सुख की अवस्था हे। जिस किसी के लिए जो भी सुख का साधन है, उसके लिए वही राग है।

नये मनोशास्त्रियो ने मानसिक दु खो के कारणो मे चिंता और भय का नाम भी गिनाया है।

गहरी नजर से देखें तो 'भय' और 'चिंता' एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और ये दोनो पहलू 'राग' वर्ग मे आते हैं। राग के साधनो के न मिल पाने का भय ही चिंता का कारण होता है। या राग के जो साधन प्राप्त है, उनके छिन जाने का भय भी चिंता पैदा करता है।

द्वेष की व्याख्या

'द्वेष' के जाने-माने रूपो मे 'क्रोध, ईर्ष्या और प्रतिशोध' आते है।

क्रोध द्वेष का स्पष्ट और अस्थायी रूप है। क्रोध का आवेश जिस तेजी से शिखर तक पहुचता है, उसी तेजी से उतर भी जाता है। इस थोडी देर की आधी मे क्रोधी किसी की हत्या भी कर सकता है और आत्महत्या भी। इस क्षणभर के आवेश का परिणाम बाद मे 'पश्चात्ताप' और 'सताप' जैसे अनेक मानसिक कष्टो को जन्म दे सकता है।

अपने से छोटो पर क्रोध करना सरल है किंतु बडो पर रुष्ट होना कठिन है। यह बडापन आयु की दृष्टि से भी हो सकता है, पद और धन की दृष्टि से भी हो सकता है। बडे के प्रति उठने वाले क्रोध को दबाने का यत्न किया जाता है लेकिन वह दब नही पाता। कुढन बनकर रिसने लगता है।

कुढन व्यक्ति को चिडचिडा बनाती है और तनावग्रस्त करती है। अधिकतर मानसिक रोगो का कारण यह दबा हुआ क्रोध होता है।

द्वेष का अप्रकट रूप ईर्ष्या है। दूसरे की सपत्ति, गुण, यश, सुदरता आदि को देखकर व्यक्ति चाहता है कि वे साधन उसके पास भी हो। यदि व्यक्ति वे साधन नही जुटा पाता और न ही सतोष कर पाता है तो ईर्ष्या उपजती है।

ईर्ष्या क्रोध की तुलना मे अधिक स्थायी भावना है। इसे हम द्वेष का छद्म रूप भी कह सकते है। क्रोधी सामने से प्रहार करता है, ईर्ष्यालु पीछे से हमला करता है।

प्रतिशोध के पात्र को हानि पहुचाना द्वेषी का उद्देश्य हो जाता है। किसी का अहित-चिंतन करते हुए, द्वेषी कितना सतप्त रहता है, इसका उसे होश नही होता। जिस समय वह अहित-कार्य पूरा

हो जाता है तो उसे लगता है कि उसे शाति मिल गई।

प्रतिशोधी को मिलने वाली शाति नये क्लेश का आधार बनती है क्योंकि जिससे बदला लिया गया है, वह चुप नही बैठता। इस प्रकार प्रतिशोध पीढी-दर-पीढी चल सकता है।

मन के प्रदूषण कैसे हटें ?

योगसूत्रकार ने 'अविद्या' को अन्य चारो क्लेशो को उपजाने वाली भूमि कहा है।[1] इतना कहकर सूत्रकार ने यह सकेत दे दिया है कि क्लेशो के नाश का उपाय 'विद्या' या ज्ञान है।

ज्ञान के अलग अलग क्षेत्र हैं लेकिन योगदर्शन चूकि अत -करण का ज्ञान है, इसलिए इस प्रसग मे हम ज्ञान का आशय मन मे उठने वाली भावनाओ का ज्ञान समझते हैं। इसी के कुछ अशो को आज मनोविज्ञान कहा जाता है।

कलुपित मन कलुपित विचार को जन्म देता है। कलुपित विचार अपने आसपास वैर और कटुता बढाते हैं।

कलुपित विचारो का प्रदूषण हवा, पानी और शोर के प्रदूषण से अधिक घातक है।

भोपाल के यूनियन कारबाईड कारखाने की गैस से मरने वालो की सख्या से अधिक सख्या उनकी है जो मन के प्रदूषण से मरते हैं। दोनो मे अतर केवल इतना है कि बाहर के गैस काड से मरने वालो के आकडे ज्ञात हो सकते है, किंतु भीतरी गैस से मरने वालो के आकडे अज्ञात रहते हैं।

मन के प्रदूषणो को समझ लेना ही उनके निवारण का कारण बन जाता है।

---

1 साधन पाद 4

व्यक्ति-भेद के अनुसार प्रदूषण का प्रभाव

कलुषित मन का व्यक्ति यदि अतर्मुखी होता है तो वह खुद को घुन लगाता है, यानी तनावग्रस्त रहता है। यदि वह बहिर्मुखी है तो समाज की हानि करता है।

किस व्यक्ति के मन का प्रदूषण समाज के लिए कितना घातक है, इसका जवाब देने के लिए यह देखना होगा कि उस व्यक्ति के प्रभाव का घेरा कितना बडा है। यदि वह मामूली हैसियत का आदमी है तो इजेक्शन के नाम पर पानी बेचकर खुदरा हत्याए करता है। अगर बडी हैसियत का है तो किसी धार्मिक या राष्ट्रीय नारे का सहारा लेकर लाखो व्यक्तियो को मौत के मुह मे धकेल देता है।

लोहे को लोहा काटता है

प्रदूषित मन का इलाज किसी औषधि से नही हो सकता। यह इसलिए कि औषधि भौतिक पदार्थ है और मन भौतिक पदार्थ नही है। औषधि का प्रभाव शरीर पर होता है, क्योकि शरीर पार्थिव (भौतिक) है।

मन चित्त मे उठने वाली स्मृतियो, वृत्तियो और विचारो का पुज है। इसलिए इसका इलाज विचारो से ही होना सभव है।

मन यदि कुत्सित विचारो का पुज बना हुआ है तो उसे स्वस्थ करने के लिए सद्विचारो का इजेक्शन देना होगा। यह इजेक्शन है—ज्ञान। व्यक्ति को मात्र इतना ज्ञान हो जाए कि उसकी समस्याओ का वास्तविक कारण अमुक क्लेश है तो आधा इलाज हो जाता है। इसके साथ-ही-साथ मन को शोधन की प्रक्रिया भी अपने आप जारी हो जाती है।

मन को पूर्णत शुद्ध करने का उपाय योगदर्शन ने ध्यान बताया है। ध्यान मन की एकाग्रता की अवस्था है। एकाग्रता के लिए

मानसिक शांति चाहिए। क्लेशभरे मन को शांति नही मिल सकती। **मानसिक शांति की आवश्यक शर्त है मन की आनंदित अवस्था।**

योगदर्शन के अनुसार ध्यान की अवस्था तक पहुचने की छ सीढिया है। वे है—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार और धारणा। सातवी सीढी ध्यान है और उसके बाद की अंतिम सीढी 'समाधि'।

सामान्य व्यक्ति यदि अष्टाग योग की यह साधना करने मे स्वय को असमर्थ पाता है तो वह मन को शात करने के अन्य उपाय भी बरत सकता है। हर व्यक्ति के स्वभाव के अनुसार गीता मे मन की शांति के लिए अनेक उपाय बताए गए है। उनमे से ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग सर्वविदित है। जैन दर्शनो तथा बौद्ध दर्शनो मे भी मन को शांत और एकाग्र करने की विधिया दी गई हैं। इनमे से प्रत्येक विधि विशेष व्याख्या चाहती है। उनके विस्तार मे न जाकर अंत मे हम योगदर्शन के केवल एक सूत्र का यहा उल्लेख कर रहे हैं।

समाधिपाद का तैंतीसवा सूत्र शायद उन लोगो के लिए रचा गया है जो अष्टाग योग का लबा मार्ग नही अपना सकते हैं, किंतु मन की शांति चाहते है। इस सूत्र का भावार्थ इस प्रकार है—

चित्त की प्रसन्नता के लिए—

सुखी जनो से मैत्री भाव रखो।
दु खी जनो पर दया करो।
पुण्यात्माओ से मेल रखो।
दुष्टो से उदासीन रहो।

'ध्यान' शिखर की ओर पाच पग

अर्थात्

बहिरग योग

इस पुस्तक का विषय सामान्य जनों के लिए ध्यान विधि सुझाना है, इसलिए अष्टाग योग के केवल आरभिक पाच अगों की यहा व्याख्या दी जा रही है।

विषय का सक्षिप्त परिचय

एक छात्र को 'गाय' पर निवध लिखने के लिए

प्राइमरी कक्षा के लिखेगा—

कहा जाए तो वह ध देती है।

गाय दूस खाती है।

गाय घो चार टागें होती हैं इत्यादि।

गाय यदि ऊची कक्षा के छात्र को दिया जाए तो वह

यही विषय सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और आर्थिक पहलुओ का

गाय के धार्मिक, स

विश्लेषण करेगा। से यह प्रकट होता है कि प्रत्येक विषय के अनेक

इस उदाहरण री दृष्टि की सीमा और हमारे ज्ञान की सीमा

पक्ष होते ह। हम और जितनी व्यापक होती है, उस सीमा तक हम

जितनी सकुचित विवेचन कर सकते है।

किसी विषय का जनो की रुचि के अनुसार ध्यानयोग के आरभिक

यहा सामान्य रया कर रहे है।

पाच अगो की व्या

ध्यानयोग और उसका उद्देश्य

शात जलाशय मे छोटा-सा ककड फेकें तो उस जलाशय मे बनने वाले लहरो के घेरे व्यापक होते हुए पूरे जलाशय तक फैल जाते हैं किंतु उफनते लहराते सागर मे बडा पाषाण-खड भी गिर जाए तो उसकी लहरो मे विशेष अतर दिखाई नही पडता।

शात मन शात जलाशय के समान है। उसमे उठने वाली विचार-तरगो का अध्ययन व्यक्ति कर सकता है किंतु अशात मन उफनते हुए सागर के समान है। उसमे एक-दूसरे से टकराती हुई विचार-लहरियो को दूर तक, देर तक निरीक्षण करना सभव नही होता।

ध्यानयोग की साधना से मन शात जलाशय के समान रहता है। उसमे उठने वाली विचार-तरगो का व्यक्ति निरीक्षण कर सकता है। ऐसा करके व्यक्ति आत्मविश्लेषक बनता है। आत्मविश्लेषक व्यक्ति मे स्थितप्रज्ञ होने की सभावना बढ जाती है।

चित्त और योग

योगदशन मे चित्त की वृत्तियो को रोकने की क्रिया को 'योग' कहा है।[1]

चित्त के विषय मे साख्य तथा योग के व्याख्याकारो ने अपने-अपने विचार प्रकट किए है। उनसे ज्ञात होता है कि

> चित्त पूर्व जन्म की स्मृतियो और विचारो का सघन पुज है। सुप्त अवस्था मे यह पुज चित्त कहलाता है, विकारी अथवा परिवर्तित अवस्था मे यह पुज 'मन' कहलाता है।

यहा प्रश्न उठता है कि चित्तवृत्तियो को रोकने का उद्देश्य क्या है। योगदशन मे उस प्रश्न का उत्तर यह है—

---

1 समाधि पाद 2

द्रष्टा का अपने अतर मे स्थित होने के लिए।[1]

पिड और ब्रह्माड का विषय

प्राचीन भारतीय मनीषियो की मान्यता है कि जो कुछ ब्रह्माड मे है, वही सब कुछ हमारे जीवित शरीर अर्थात् पिंड मे भी है। मानो हमारा पिंड विशाल ब्रह्माड का लघु रूप है।

ब्रह्माड मे जो हो चुका है, हो रहा है, होना है, उन सबको द्रष्टा अपने अतर मे झाककर देख सकता है। जो हो चुका है, उसके अवशेष आज मे छिपे है तथा जो होना है, उसकी सभावनाए, 'हो रहा है' मे विद्यमान हैं। जिन्हे हम स्थिर प्रज्ञा से ही देख सकते है।

जो हुआ है, जो हो रहा तथा होना है, उनके मूल मे सृष्टि का एक निश्चित क्रम है। यह बिलकुल ऐसा है जैसे अको के क्रम मे 'एक' के बाद 'दो' का होना या 'ग्रीष्म ऋतु' के बाद 'वर्षा ऋतु' का आना।

जो व्यक्ति इस क्रम को पूरी तरह समझ लेता है, उसके लिए त्रिकालदर्शी होना सभव है। ऐसे द्रष्टा को हम 'सिद्ध' व्यक्ति कहते हैं।

'अतर्मुखी' तथा 'योगी' मे अतर

ब्रह्माड के लघु रूप को समझने के लिए मन को बाहरी विषयो से हटाकर भीतरी जगत् मे एकाग्र करना पडता है।

आधुनिक मनोविज्ञान अतर्मुखी (Introvert) और बहिर्मुखी (Extrovert) ये दो प्रकार के व्यक्तित्व मानता है।

बहिर्मुखी वह जो अपने शरीर से बाहर के समाज मे सुख पाए। अतर्मुखी वह जो अपने भीतर डूबा रहे।

---

1 समाधि पाद 3

अतर्मुखी बेशक अपने भीतर डूबा रहता है किंतु अतर्मुखी और योगी मे अतर होता है। शैशवकाल मे अपने आसपास के व्यक्तियो से तग आकर जो व्यक्ति विवशतापूर्वक अपने बाहर के समाज से कटकर रहना चाहता है और वह अकेलेपन का अभ्यस्त बन जाता है, मनोविज्ञान उसे अतर्मुखी वर्ग मे रखता है।

जो व्यक्ति एक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विधिपूर्वक अपने स्वरूप मे एकाग्र होता है वह योगी होता है। यह अलग बात है कि अतर्मुखी व्यक्ति बहिर्मुखी व्यक्ति की अपेक्षा कम श्रम से योगी बन सकता है।

एकाग्रता के उद्देश्य पर विचार

जिन विषयो मे हमारी आसक्ति होती है, उनके प्रति हमारा मन बिना प्रयत्न के एकाग्र हो जाता है। यदि हमारी इस सहज एकाग्रता की उपलब्धि हमारे या समाज के लिए हितकर है तो वह कुछ सीमा तक योग का अभीष्ट पूरा करती है, किंतु हममे से अधिक जनो की एकाग्रता सामान्यत उन सासारिक भोगो के प्रति होती है जो क्षणिक सुख तो देते हैं किंतु बाद मे उनका परिणाम दुखद होता है। इसलिए एकाग्रता के उद्देश्य पर भी विचार करना आवश्यक है। योगदर्शन केवल उन्ही लक्ष्यो की ओर सकेत करता है जिनसे व्यक्ति समाज का अहित किए बिना अपने उद्देश्य की ओर बढ सकता है।

'योगदर्शन' हिंदुओ के छ शास्त्रो मे से एक है। पतजलि ने एकाग्रता की परम अवस्था, समाधि तक पहुचने की यात्रा को इन आठ चरणो मे बाटा है—

1 यम
2 नियम
3 आसन

4 प्राणायाम
5 प्रत्याहार
6 धारणा
7 ध्यान
8 समाधि

योगशास्त्र मे इन आठ अगो मे से आरभिक पाच अगो को 'वहिरग' यानी योग के बाहरी अग कहा है और अतिम तीन अगो को 'अतरग' कहा है । आरभिक अग अतिम अगो के लिए आधार-भूमि बनाते हैं ।

यहा केवल आरभिक पाच अगो की चर्चा होगी । उनमे से प्रत्येक अग ध्यान शिखर की ओर बढता हुआ एक-एक पग है । ●

योगमार्ग पर पहला पग

यम

प्रत्येक क्षेत्र मे 'यम' शब्द का अलग अथ है किंतु योग के क्षेत्र मे 'यम' का अर्थ है समाज के प्रति पालन किए जाने वाले कत्तव्य।

जिस समाज के हम अग है, उसके प्रति कत्तव्य से विमुख होकर हम शात अवस्था प्राप्त कर ही नही सकते। यदि हमने किसी जीव की हानि की है, अपने लाभ के लिए मिथ्या भाषण किया है, अय के द्रव्य को चुराने का हमारे मन मे विचार आया है, हमारी सचय वृत्ति के कारण हममे समाज के किसी वग का अहित हुआ है तो ऐसे दुष्कर्मो की छाप हमारे अतमन या अवचेतन मे कही न कही हमें कचोटती है। जिसमे हमारी शाति मे बाधा आती है।

कामुकता एक ऐसी तीव्र उत्तेजना है कि उसके मन मे होते हुए अन्य किसी ओर मन जमता नही।

इन सारी स्थितियो का निरीक्षण मनन करके योगशास्त्र ने एकाग्रता रूपी ध्येय की प्राप्ति के लिए यमो के पालन का निर्देश दिया है।

यमों का विवरण

योगदर्शन मे वर्णित यम पाच है

1 अहिंसा
2 सत्य
3 अस्तेय
4 ब्रह्मचय
5 अपरिग्रह

पहला यम 'अहिंसा'

जीवहत्या से विमुख होने को आमतौर पर अहिंसा कहा जाता है। यह 'अहिंसा' का आशिक अथ है। इसका व्यापक अथ है किसी को भी दु ख न देना। क्रूरता करने तथा क्रूरता का रस लेने से सबधित सभी क्रियाओ का निषेध 'अहिंसा' द्वारा किया गया है।

हमारी क्रूरता तो हमे अशात बनाती ही है, साथ ही फिल्मो, नाटको मे हिंसा के दृश्य, मुर्गो की लडाई, क्रुद्ध साडो के द्वद्व-प्रदर्शन आदि उत्तेजक दृश्यो तथा कथनो की स्मृतिया भी हमारे मन को यदा-कदा अशात बनाती है।

दूसरा यम 'सत्य'

सत्य का अथ है जैसा देखना, सुनना तथा समझना, उसे वैसा ही आगे बढा देना। उससे विपरीत आचरण झूठ है।

सत्य के मूल मे भावना पर-कल्याण की है। साहित्यिक अलकार झूठ होकर भी यदि आधारभूत सत्य को उजागर करते है तो वे भी सत्य ही है।

जगली जीवो के वार्तालाप पर आधारित पचतत्र की कहानिया कल्पित होने पर भी सत्य के अनेक अशो का उद्घाटन करती हैं। अत वे कल्याणकारी होने के कारण सच की सीमा मे आती हैं।

वे ऐतिहासिक उद्धरण जो घृणा तथा वैमनस्य बढाने के लिए प्रेरित करें, सत्य होकर भी असत्य है।

झूठ के खुल जाने का 'भय' हमे भीतर ही कही-न-कही अशात बनाता है। इसलिए 'सत्य' के पालन को 'यमो' मे रखा गया है।

तीसरा यम 'अस्तेय'

अस्तेय यानी चोरी न करना। चोरी का अर्थ हम आमतौर पर यह लेते हैं कि किसी की नजर बचाकर कुछ चुरा लेना। यह चोरी का आशिक अर्थ है। वस्तुत चोरी के अतर्गत वे सभी क्रियाए आती है, जिनके अनुसार हम किसी वस्तु को उसके समाज मे निर्धारित मूल्य को चुकाए बिना अपनाते हैं। इस दृष्टि से जो मालिक श्रमिक को उसके काय का पारिश्रमिक नही देता या जो श्रमिक काम के घटो के दौरान पूरा कार्य नही करता, इन दोनो के कार्य चोरी माने जाने चाहिए।

आज के व्यक्ति की मायता है कि जिस वस्तु की रक्षा कोई नही कर रहा, उसे ग्रहण न करना मूर्खता है। अर्थात् जहा पकडे जाने का भय नही, वहा से कुछ चुरा लेने मे कोई हर्ज नही है। किंतु किसी अरक्षित वस्तु को चुराने की प्रेरणा जिसे अतर्मन से नही मिलती, वही अस्तेय व्रतधारी है।

चौथा यम 'ब्रह्मचय'

ब्रह्मचय के पक्ष विपक्ष मे बहुत कुछ कहा गया है। इसका कारण यह है कि यह सर्वाधिक तीव्र उत्तेजना 'काम' के प्रति निषेध करता है।

काम-भाव की उत्पत्ति से उत्कर्ष तक की यात्रा को शास्त्रियो ने आठ चरणो मे बाटा है। यथा —

विषम लिंगियो का स्मरण करना, उनकी कीर्ति का बखान

करना, उनसे क्रीडा करना, उन्हे देखना, उनसे गुप्त वातचीत करना, उनसे भोग का विचार मन मे लाना, उनसे भोग का पक्का इरादा कर लेना, उनसे मैथुन कर लेना, यह आठ प्रकार का मैथुन होना है। इससे विपरीत आठ प्रकार का ब्रह्मचर्य हुआ करता है।[1]

इन आठ प्रकारो से सामान्य व्यक्ति का वचाव सभव है या नही, यह एक अलग विषय है। इस समय हमे योग की दृष्टि से ब्रह्मचर्य पर विचार करना है और इस दृष्टि से यह वात अत्यत वैज्ञानिक है कि यदि हम काम-सुख की अतिम अवस्था 'मैथुन' से वचना चाहते हैं तो हमे उस सुख की प्रारभिक अवस्था 'स्मरण' से वचाव करना पडेगा।

इस वात को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते है।

सामान्य विस्फोटक पदार्थ 'पटाखा' तथा विशेष विस्फोटक पदाथ 'वारूदी सुरग' के साथ पलीता यानी डोरी लगी रहती है। इस डोरी के माध्यम मे आग विस्फोटक तक पहुचती है। जिस विस्फोटक पदार्थ की विध्वस-क्षमता जितनी अधिक होती है, उस पदार्थ से लगी पलीते की डोरी भी उतनी ही अधिक लवी रखी जाती है।

यदि कोई व्यक्ति काम नामी उत्तेजना से सचमुच वचना चाहता है तो उसे 'मैथुन' रूपी विस्फोटक तक पहुचाने वाले लवे पलीते के आरभिक छोर 'स्मरण' से वचना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति सप्त चरणो से बचाव न करे और यह समझे कि वह स्वय को मैथुन से विमुख कर लेगा, तो वह भ्रम मे है। वह अपनी इच्छा-

1 स्मरण कीतन केलि प्रेक्षण गुह्य भाषणम।
सकल्पोऽध्यवसायश्च क्रिया निष्पत्ति रेव च॥
एतमैथुनमष्टाग प्रवदन्ति मनीषिण।
विपरीत ब्रह्मचयम एतदेवाष्ट लक्षणम्॥

शक्ति द्वारा शारीरिक मैथुन से बच सकता है किंतु मानसिक मैथुन से न बच सकेगा।

पाचवा यम 'अपरिग्रह'

'अपरिग्रह' द्वारा सचय-वृत्ति का निषेध किया गया है। सामान्य आवश्यकता से अधिक साधनो (धन सपत्ति) का सग्रह एक ओर व्यक्ति को अनेक चिंताओ से युक्त रखता है, दूसरी ओर अन्य व्यक्तियो की नजर मे सपन्न व्यक्ति दूसरो का ईर्ष्यापात्र बनता है। इससे भी मानसिक शाति मे बाधा आती है। यदि वह सचय बलपूर्वक किया गया है तो व्यक्ति ईर्ष्यापात्र की बजाय 'वैर पात्र' भी बनता है और अनेक जनो मे अपने प्रति बदले की भावना जगाता है। उन सब प्रतिशोधी जनो से स्वय को बचाने के यत्न मे लगा व्यक्ति मन की शाति कैसे प्राप्त कर सकता है?

गई शाति को लौटाने का उपाय सचय-वृत्ति का त्याग ही है। किंतु बहुत से अपरिग्रही व्यक्तियो से भी मानसिक शाति दूर रहती है। उसका कारण यह होता है कि वे त्याग करके त्यक्त वस्तुओ की स्मृति को अपने मन मे बनाए रखते है अथवा उस विशाल त्याग का अहकार मन मे बसाए रखते है।

'नेकी कर कुए मे डाल' कहावत का आशय है—किसी का भला करने के उपरात उसकी स्मृति से भी मुक्त होना। अन्यथा वह स्मृति हमे मानसिक रूप से आदोलित करती रहेगी और हमारी परम शाति मे बाधक होगी।

पचशील एव महाव्रत

योगदर्शन मे वर्णित ये पाच यम ही बौद्ध मत के 'पचशील' हैं और इन्ही यमो का सभी जगह सभी अवस्थाओ और सभी परिस्थितिया मे पालन करने का निर्देश है।

यदि कोई व्यक्ति कहे कि मैं अमुक तिथि या अमुक वार को हिंसक कार्य नही करूगा या तीथ मे हिंसा नही करूगा, या सोचे कि व्यापार मे तो बिना झूठ के काम चल ही नही सकता अथवा जान बचाने के लिए झूठ का सहारा लेने मे कोई हर्ज नही। टैक्स की चोरी तो सभी करते है इसलिए उचित है। ब्रह्मचर्य का अथ तो मात्र विवाह बधन से दूर रहना है अथवा अपने विवाहित यौन सहयोगी के साथ ऋतु एव काल के अनुसार सहवास करना है। अथवा धन-सपत्ति मेरे नाम तो है ही नही, मेरी पत्नी या पुत्र के नाम है इत्यादि। इस प्रकार के बचाव पक्ष के शब्द दूसरो की नजर मे स्वय को न्यायसम्मत सिद्ध कर सकते है किंतु अपने मन की शाति प्राप्त करने मे ये सहायक नही है।

देश, काल और पात्र का विचार त्यागकर समभाव से सभी अवस्थाओ मे इन यमो का पालन करना ही इन्हे महाव्रत का रूप देता है।

महाव्रत और सिद्धिया

योगदर्शन मे इन महाव्रतो की उपलब्धिया अर्थात् सिद्धिया इस प्रकार है।[1]

1 अहिंसा के पूणत पालन करने मे समीप के प्राणियो मे वैर का भाव समाप्त हो जाता है।
2 सत्य मार्ग पर दढ रहने से योगी की वाणी अमोघ हो जाती है। अर्थात् उसके मुख से निकला हर वचन पूरा हो जाता है।
3 चोरी के विचार के त्याग से योगी को सभी रत्नो की प्राप्ति होती है। अर्थात् उसे किसी रत्न की

1 साधन पाद 35 से 39

आवश्यकता नही रहती।

4 ब्रह्मचर्य की पूणता से बल का लाभ होता है।

5 अपरिग्रह पर दृढ रहने से जन्म-जन्मातर का बोध हो जाता है।

यदि कोई व्यक्ति इन उपलब्धियो की आशा से इन महाव्रतो का पालन करता है तो वह एक प्रकार से परिग्रही हो जाता है। बिना किसी आशा के अपने मन की शाति के लिए इन व्रतो का पालन करने वाले को सिद्धिया अनचाहे मे मिलती है। चाहने वाले को नही मिलती।

योगमार्ग पर दूसरा पग

नियम

आत्मिक हित के लिए पालन करने योग्य कर्त्तव्यो को योगदशन मे नियम कहा गया है।

योगदशन के साधनपाद के ३२वे सूत्र मे जिन पाच नियमो का उल्लेख है वे है—

शौच, सतोप, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान।

इन पाच नियमो की उपयोगिता योगदशन मे इस प्रकार बताई गई है [1]

> शौच से अपने अगो से घृणा होती है तथा दूसरो से ससर्ग घट जाता है। साथ ही चित्त की शुद्धि, मन की प्रसन्नता, एकाग्रता तथा आत्मदर्शन की योग्यता प्राप्त होती है।
>
> सतोप से सर्वोत्तम सुख प्राप्त होता है।
>
> तप से अशुद्धि का क्षय होता है।

1 साधनपाद 40 से 45

स्वाध्याय से इष्ट देवता का मिलाप होता है।
ईश्वर-प्रणिधान से समाधि की सिद्धि होती है।

उपर्युक्त सूत्रो मे जो भाव छिपे है उन्हे समझने के लिए सहस्रो पृष्ठ रचे गए है और रचे जा रहे है।

हर युग मे सूत्रो का भाव समझने के लिए नयी व्याख्या की आवश्यकता क्यो बनी रहती है, इस विषय पर विचार करने के साथ सूत्र-शैली की आवश्यकता पर भी विचार करना चाहिए।

व्याख्याए और मत मतातर

जिन दिनो लेखन-सामग्री सहज रूप से सुलभ न थी और ज्ञान-प्रसार के लिए मुद्रण जैसी पद्धति का आविष्कार न हुआ था, उन दिनो ज्ञान के सरक्षण और प्रसार के लिए सूत्र शली का विकास हुआ। उसी काल मे व्याकरण, धम, दशन, काम आदि विषयो पर सूत्रो के सुनने और स्मरण रखने की व्यवस्था थी। **श्रुति और स्मृति** के माध्यम से ज्ञान दिशा और काल की सीमाओ को लाघता हुआ सक्षिप्त रूप म सुरक्षित रहा।

किसी भी विशाल भडार को पहले सूत्र रूप मे सक्षिप्त करने, तत्पश्चात् उस सक्षिप्त को आवश्यकता के समय व्याख्या देने से मूल ज्ञान मे भाष्यकर्ताओ के विचारो का समावेश होता रहता है। जिस भाष्यकार के चितन का क्षेत्र जितना विशाल या जितना सीमित होता है, उसका आभास भाष्य मे समा जाता है। फल यह होता है कि एक ही सूत्र के दो भाष्यकारो की व्याख्या मे अतर आ जाता है। इसी अतर के कारण मत मतातरो का जन्म होता है।

जिन दिनो सूत्रो की रचना-शैली का विकास हुआ था, उन्ही दिनो व्याख्या-शैली भी विकसित रूप मे थी। उदाहरण स्वय पतजलि है। इसी योगदशन के प्रणेता 'पतजलि' स्वय पाणिनिकृत व्याकरण 'अष्टाध्यायी सूत्रपाठ' के व्याख्याकार भी हैं। जी हा,

'महाभाष्य' के रचनाकार पतजलि ही कहे जाते हैं ।

प्राचीन समाज मे सूत्र और भाष्य, इन दोनो विधाओ का विकास साथ-साथ हुआ । अत उस काल मे एक ही सूत्र पर रचे गए दो भाष्यो मे अतर की सभावना कम रहती है, क्योकि एक काल सीमा मे जो शब्द जिस अर्थ मे प्रयुक्त होता है, वह सबको ज्ञात रहता है, किंतु कुछ समय के उपरात शब्दो के प्रचलित अर्थों मे अतर आ जाता है। इस समय पुराने भाष्य को समझना व्यक्ति के लिए कठिन हो जाता है ।

उदाहरणत किसी समय 'वैष्णव' का अर्थ था विष्णु का उपासक। आज इसका अर्थ 'शाकाहारी' अधिक प्रचलित है ।

प्राइमरी कक्षा मे कश्मीर सबधी पाठ मे एक बार मैंने पढा था, "कश्मीर की वूलर झील भारत मे मीठे पानी की सबसे बडी झील है।"

उन्ही दिनो पिताजी की उगली थामे कश्मीर जाने का सयोग हुआ । वूलर झील का पानी चखा तो उसे फीका पाया । बाद मे ज्ञात हुआ कि झील के जल के सदभ मे 'मीठा' का अथ खारेपन का अभाव है।

कुछ शब्दो के अथ वय और अनुभव से सबधित होते है । रात्रि-क्रीडा की चर्चा करती हुई निरक्षर युवतियो मे जब एक कहती है— क्या रात तेरे पति ने कुछ किया ? तो इस चर्चा की भनक पाने वाला पाच सात वष का बालक, जो अक्षर-ज्ञान के विषय मे इन युवतियो से अधिक ज्ञानी है, इस 'किया' का अर्थ क्या समझेगा ? कोई भी शब्दकोश इस सबध मे उसकी सहायता नही कर सकता। और बालपन से किशोर अवस्था तक पहुचते ही बिना किसी के बताए ही 'किया' का अथ उसकी समझ मे आने लगेगा।

दिशा, काल, वय, अनुभव, सदभ आदि अनेक कारण शब्दो तथा वाक्यो का अथ समझने मे सहायक होते हैं। उनमे से किसी

भी एक को अनदेखा करके सूत्र मे छिपे अर्थ के निकट पहुचना असभव होता है।

शौच आदि नियमो की व्याख्या करते हुए हमे पहले यह देखना है कि ये किस सदभ मे आए हैं।

1 शौच

सामान्य जनो की दृष्टि मे शौच का अर्थ मल-मूत्र-विसजन है। शौच शब्द को यदि हम तन के स्वास्थ्य की पुस्तक मे पाते तो तन को स्वच्छ रखने के लिए किए जाने वाले कार्यो की ओर हमारा ध्यान जाता। इससे जरा आगे बढते तो नेति धौति आदि हठयोग की क्रियाओ को शौच के अतगत मानते। किन्तु यहा विषय 'ध्यान' है जिसका उद्देश्य है परम एकाग्रता की अवस्था। इस परम एकाग्रता के लिए मन के कलुष (मलिनता) को दूर करने की आवश्यकता है। योगसूत्रो के प्राचीन भाष्यो मे मन के छ प्रकार के कलुष बताए गए हैं।

1 सुखी होने की कामना होने, किंतु सुख के साधन न होने से मन का दुखी होना 'राग' कलुष है।
2 दूसरो की सपत्ति, गुण, यश से मन को होने वाला दु ख 'ईर्ष्या' कलुष है।
3 ईर्ष्या-पात्र के अपकार करने की इच्छा 'अपकार' कलुष है।
4 ईर्ष्या-पात्र का छिद्रान्वेषण, अनादर तथा चुगली आदि करने की त्रियाए करना 'असूया' कलुष है।
5 प्रतिशोध भावना को 'अमप' कलुष कहा गया है।

'शौच' नियम की सिद्धि होने पर न अपने तन के प्रति आसक्ति का भाव रहता है न ही दूसरो के प्रति। जब तन गौण और मन

मुख्य बन जाता है तो व्यक्ति अपने-आपमे आनद पाने लगता है। फलत वह एकातप्रिय बन जाता है। एकातप्रियता ध्यान मे सहायक होती है।

'शौच' सिद्धि से मन घृणा, द्वेष, क्रोध आदि मलिनताओ से मुक्त होकर आत्मसाक्षात्कार करने के योग्य हो जाता है।

2 सतोष

विषय यदि राजनैतिक, जीविका या विज्ञान का होता तो सतोष को उन्नति का बाधक समझा जाता, किंतु यहा 'ध्यान' के सदर्भ मे सतोष की व्याख्या होनी है।

सतोष का आशय तृष्णा का अभाव है। तृष्णा व्यक्ति को मृग-मरीचिका से त्रस्त करके उसे जो प्राप्त है, उसके सुख से वचित रखती है। इसके विपरीत सतोष 'प्राप्त' को उपलब्धि मानकर उसी मे सुख का आभास पाता है। जिसका मन सुखी है उसके लिए एकाग्रता सहज है। इसीलिए योगशास्त्र सतोष को सर्वोत्तम सुख मानता है।

3 तप

तप का अर्थ है सहन-शक्ति का विकास। देखना यह है कि सहन शक्ति किस क्षेत्र मे ?

समाज मे विचरण करते हुए हम देखते हैं कि सामान्य जन उन्ह तपस्वी मानते है जो सर्दी मे ठडी रेत पर नग्न बैठे रहते है, या ग्रीष्म ऋतु मे कबल ओढे बैठे रहते है। ऐसे तप स्थूल दृष्टि से सबको दिखाई देते हैं। ऐसे शरीर तपाने वालो को तपस्वी मानना सहज होता है।

उच्च स्तर के तप वे हैं जो प्रकटत दिखाई नही देते, किंतु विषम स्थिति मे जिनकी परीक्षा होती है। वे हैं—काम, क्रोध आदि मनोभावो पर नियत्रण।

तप का वास्तविक उद्देश्य है तामस एव राजस गुणो का नाश करके सात्विक गुणो को शेष रहने देना। वही तप समाधि रूपी लक्ष्य का सोपान बन सकता है।

4 स्वाध्याय

स्वाध्याय का अथ लिया जाता है ऋपिकृत ग्रथो का पठन। यह शब्द का सीमित अथ है। इसका व्यापक अर्थ है—जो कुछ हमारे अनुभव मे नही आया, किंतु दूसरे मनीषी जनो के अनुभव मे आया है, उसे किसी भी विधि से जानना।

अध्ययन की जितनी भी प्रणालिया है, चाहे वे पठन की हो, अनुशीलन की, निरीक्षण की या भ्रमण की, वे सब स्वाध्याय के अतगत है। यहा तक कि सिनेमा, टी० वी०, रेडियो आदि कायक्रमो का तटस्थ भाव से अध्ययन करना भी स्वाध्याय का ही अग है।

इस पुस्तक के परिशिष्ट भाग मे 'स्वाध्याय के सूत्र' शीपक से कुछ सूक्तिया प्रस्तुत की जा रही है। ये सूक्तिया व्यक्ति के दृष्टिकोण को व्यापक बनाती है और मन-मस्तिष्क को शाति देती हैं। अत उन्हे स्वाध्याय का अग मानकर इस पुस्तक के अत मे सकलित किया जा रहा है।

स्वाध्याय से साधक का दृष्टिकोण व्यापक हो जाता हे और वह ब्रह्म के विराट् रूप के अधिक बडे अश का साक्षात्कार करने मे समथ हो जाता है। हमारे यहा योगी को दिव्यदृष्टि सपन्न या सवज्ञ समझे जाने की मान्यता है। उसकी पृष्ठभूमि मे स्वाध्याय से उपजा सम्यक् ज्ञान होता है।

योगदशन मे स्वाध्याय का लाभ इष्ट देवता से मिलाप कहा गया है। ऋपिकृत ग्रथो मे मत्रो के विपय को देवता कहा गया है। अन्य मतो मे सामान्य जनो से ऊचे दिव्य जना को देवता विशेपण

दिया गया है। जो भी जिसका इष्ट है, उसको देवता मानकर उसी से 'मिलाप' होना यागदर्शन का आशय है।

ईश्वर-प्रणिधान

इस नियम का आशय है कमफल को अपने इष्ट के अपण करना। ऐसा करके हम अपने इष्ट पर कोई एहसान नही करते बल्कि स्वय को तनावमुक्त करते है।

गीता मे श्रीकृष्ण ने कम की वर्जना नही की, अपितु कमफल को ईश्वरार्पण करने का सदेश दिया हे। आधुनिक समाजविज्ञानी की परिभाषा मे यह बात यो कही जाती है—"जो भी हमसे होता है वह परिस्थितियो की प्रेरणावश होता है।"

उसका फल चाहे वह हमारी आशाओ के अनुकूल हो या प्रतिकूल, उसे हम यदि परिस्थितियो की देन मानकर सहप स्वीकार कर लें तो हम चाहे आस्तिक हो या नास्तिक, ईश्वर-प्रणिधान (ईश्वरार्पण) के भाव के निकट पहुच जाते हैं।

योगदर्शन 'ईश्वर-प्रणिधान' को समाधि की सिद्धि का एक उपाय मानता है। इस सूत्र का भाव यह है कि जब हममे कर्तापन का भाव लुप्त हो जाता है और जो कुछ हमारे द्वारा हुआ है, उसके हम निमित्त मात्र रह जाते है तो उसके फल से सुखी या दु खी होने का प्रश्न ही नही उठता। और जो व्यक्ति सुख-दु ख की अनुभूति से शू य है उसके लिए ध्यान और समाधि सहज है। ●

योगमार्ग पर तीसरा पग

आसन

'आसन' को अष्टाग योग का तीसरा अग माना गया है। और यह योग का इतना लोकप्रचलित अग है कि सामान्य जन योगासन को ही 'योग' मानते है।

आसन के विषय मे हठयोगियो ने विशेष परीक्षण-अनुसधान किए हैं और उन्होने शरीर के विभिन्न अगो, नाडियो और मास-पेशियो को बल देने के लिए अनेक आसनो का आविष्कार किया है। कुछ व्यक्ति चौरासी आसनो को प्रमुख मानते है। किन्तु वास्तव मे आसनो की गणना नही की जा सकती।

अधिकतर आसनो का उद्देश्य पेट और पाचन-सस्थान को ठीक रखना तथा रीढ की हड्डी की लचक को बनाए रखना होता है किंतु योगदर्शन मे योग-साधना के लिए स्थिर तथा सुखपूर्वक बैठने की स्थिति को 'आसन' कहा गया है। योग की परम अवस्था 'समाधि' के लिए आसन की सिद्धि अत्यावश्यक है।

'आसन-सिद्धि' क्या है ?

एक ही स्थिति मे साढे तीन घटे तक स्थिरतापूर्वक बैठने की क्षमता को 'आसन-सिद्धि' कहा जाता है और इसके उपरात उसी आसन मे बिना ढलके या लेटे ढाई घटे तक सो सकने की क्षमता को आसन की उच्च सिद्धि माना जाता है।

समाधि रूपी सोपान तक पहुचने के लिए सिद्धि की यह अवस्था न्यूनतम अवस्था है। इस अवस्था को बढाकर दिनो, सप्ताहो, मासो तक बढाया जाना अपेक्षित होता है।

आसन-सिद्धि की बाधाए

यदि साधक लबी अवधि के लिए स्थिर बैठना चाहे तो उसके शरीर से पसीना, मूत्र आदि के रूप मे जल तत्त्व का विसजन होगा। उसे पूरा करने के लिए वह जल तत्त्व ग्रहण करेगा।

आहार के अजन-विसजन का अपना तत्र है। जो आहार लिया जाएगा उसका शेष अश मल-शौच के रूप मे विसर्जित भी होगा। इस प्रकार मल-मूत्रादि के वेग भी लबे काल तक स्थिर बैठने के लिए बाधक बनते है। इन बाधाओ के निवारण के लिए हमारे ऋषियो ने पहाडो की कदराओ को तपोभूमि के रूप मे चुना।

आसन सिद्धि के लिए ऐसे स्थानो को उपयुक्त मानने के अनेक कारण है, जिनमे से कुछेक की चर्चा यहा की जा रही है।

जल की मात्रा अधिक गर्मी मे पसीना बनकर बह निकलती है। उस कमी का आभास हमे प्यास के रूप मे होता है। इस प्रकार जल लेने और उसका शेषाश मूत्र या स्वेद के रूप मे विसर्जित करने का चक्र निरतर चलता रहता है।

अधिक शीत मे भूख अधिक लगती है। उसकी पूर्ति आहार द्वारा होती है। आहार लेने तथा उसके शेषाश के मल रूप मे विसजन का अपना चक्र है। एक-दूसरे पर आधारित ये दोनो

अवस्थाए आसन-सिद्धि मे बाधक होती है।

पर्वतो की कदराओ का वातावरण समशीतोष्ण रहता है। ऐसे वातावरण मे भूख-प्यास को नियन्त्रित करना अपेक्षाकृत सहज होता है।

स्थूल आहार को निरतर कम करते हुए अल्पाहारी से निराहारी अवस्था तक पहुचना सभव होता है। यहा यह प्रश्न किया जा सकता है कि **लबे समय तक निराहार रहकर जीवित कैसे रहा जा सकता है ?**

गभीरता से देखा जाए तो हम पाएगे कि निराहारी साधक भी सूक्ष्म आहार लेता है और उसका मल सूक्ष्म रूप से विसर्जित भी करता है।

श्वास के रूप मे वह वायु से पोषक तत्त्व लेता है और प्रश्वास के रूप मे वायु के मल तत्त्व विसर्जित करता है।

वायु मे जीवन-तत्त्वो की सभावना विद्यमान है और उसे हम अनुभव भी कर सकते हैं। उदाहरणत हम जानते ही है कि फूलो के सपर्क से वायु सुगधित होती है और घनी आबादी और कल-कारखाने के क्षेत्र की वायु मे धूल, धुआ आदि अनेक दूषित तत्त्व मिल जाने से वायु दूषित भी हो जाती है। इससे हम जान सकते है कि वायु मे अच्छे या बुरे तत्त्वो को अपने मे समाने की अद्भुत क्षमता है।

जरा कल्पना कर नागरिक कोलाहल से दूर ऐसे स्थानो की, जहा की वायु का सपर्क वृक्षादि वनस्पतियो तथा जडी बूटियो से है। वहा की वायु मे पोषक तत्त्वो के होने की सभावना कितनी अधिक हो सकती है ? एक योगी को जीवित रहने योग्य तत्त्वो की आवश्यकता ही कितनी होती है ?

हमारी अधिकतर शक्ति तो ज्ञानेंद्रियो तथा कर्मेंद्रियो की क्रियाशीलता के माग से व्यय होती है। जो व्यक्ति स्पर्श करने,

सुनने, देखने, सूघने, चखने, हाथ-पाव चलाने, वाक्शक्ति का प्रयोग करने, स्थूल आहार के खाने-पचाने तथा काम, क्रोध आदि आवेगो के रूप से शक्ति व्यय नही करता, उसे कितना आहार चाहिए। उसे मात्र जीवन की लौ को प्रज्ज्वलित रखने के लिए जितने आहार की आवश्यकता होती है, वह शुद्ध वायु के सेवन से प्राप्त हो सकता है।

वायु मे पोषक तत्त्वो का समावेश करने के लिए सभवत होमादि यज्ञो का प्रचार प्राचीन काल मे हुआ होगा।

ध्यान के लिए उपयुक्त आसन

योगी जनो ने 'पद्मासन' तथा 'सिद्धासन' को ध्यान-साधना के लिए उपयुक्त माना है। इन आसनो के दौरान हाथो और उगलियो की मुद्रा कैसी होनी चाहिए, इस पर भी योगी जनो ने विचार व्यक्त किए है।

ध्यान के इसी प्रसग के साथ हम यहा केवल इन दो आसनो तथा इनमे सबधित हस्तमुद्राओ की विधिया विस्तार से बताते है।

'पद्मासन' तथा 'सिद्धासन' से पहले

आलती-पालती लगाकर बैठने वाले व्यक्ति पद्मासन और सिद्धासन को अधिक सरलता से सीख सकते है। जो व्यक्ति कुर्सी पर बैठने के आदी होते हैं, उन्हे पहले आलती-पालती लगाने अर्थात् 'सुखासन' मे बैठने का अभ्यास करना चाहिए।

सुखासन

सुखासन की अनेक विधिया हैं। इन विधियो मे प्रमुख क्रिया है 'घुटना मोडना'।

पश्चिमी देशो मे, जहा खडे होकर या मेज-कुर्सी पर काय करने का रिवाज है, वहा भी आरामकुर्सी तथा सोफासेट की सीट की ऊचाई कार्यालय की कुर्सी से कम रखी जाती है। इस कम ऊची सीट पर घुटना तनिक अधिक मुडता है। इससे थकावट दूर होती है।

भारत मे चटाई, दरी आदि पर बैठने की प्रथा सामान्य रूप मे प्रचलित है, इसलिए सामान्यत भारतीय जन बिना किसी यत्न के सुखासन मे बैठ सकते है। पश्चिमी देशवासी तथा भारत के वे लोग, जो पश्चिमी रिवाज के अनुसार रहते हैं, उन्हे सुखासन अभ्यास मे सिद्ध होता है।

नव अभ्यासी जनो को चाहिए कि वे धरती पर कई तहो की चादर अथवा पतला गद्दा बिछाकर बैठें और बारी-बारी से दाया और बाया घुटना मोडें। जितनी देर तक आराम से घुटना मुडा रह सके उतनी देर मोडने का अभ्यास करे। दद या थकावट का अनुभव होने पर टागे फिर सीधी करके थोडी देर बाद बारी बारी से दोनो घुटने मोडें।

पहली बार घुटना जितना आसानी मे मुड सके, उतना मोडें। फिर धीरे-धीरे अधिक मोडने का अभ्यास करे। जब दोनो घुटने इतने मुड सकें कि पूरी पिंडली जघा से सट जाए तो दोना पिंडलियो को एक-दूसरे पर कैची की तरह आडा टिकाए।

बायी पिंडली पर दायी पिंडली आए या दायी पिंडली पर बायी, इस विषय मे कोई नियम नही है। बदल-बदलकर दोनो प्रकार मे अभ्यास करना चाहिए।

हस्तमुद्राए

सिद्धासन और पद्मासन मे शरीर तथा टागो की स्थिति के साथ हस्तमुद्राए भी सुझाई जाती हैं। इसलिए इन दो आसनो की विधि

बताने से पहले हस्तमुद्राओ की विधि बताते हैं।

ध्यानयोग साधना मे चार प्रकार की हस्तमुद्राए प्रचलित हैं।

1 चिन्मुद्रा

इस मुद्रा मे अगूठे का ऊपरी सिरा तथा तर्जनी उगली (अगूठे के साथ की पहली उगली) का ऊपरी सिरा मिलाया जाता है, शेष तीनो उगलिया अलग खडी अवस्था मे रखी जाती है।

2 ब्रह्माजली

इस हस्तमुद्रा मे खुली हुई हथेलियो की आकृति बहुत कुछ कटोरे जैसी बनाई जाती है। खुली हुई बायी हथेली पर खुली हुई दायी हथेली रखी जाती है। दोनो हथेलियो का रुख ऊपर की ओर रहता है।

3 ज्ञानमुद्रा

तर्जनी (पहली उगली) को अदर की ओर मोडकर उसका ऊपरी सिरा अगूठे के मूल मे बने उभार पर लगाया जाता है। शेष तीनो उगलिया अलग खडी अवस्था मे रखी जाती हैं।

4 योनिमुद्रा

इस मुद्रा मे लेटी अवस्था मे पडी दोनो हथेलियो का रुख ऊपर की ओर रहता है। दोनो हाथो की उगलियो को एक दूसरे मे इस प्रकार फसाया जाता है कि दोनो अगूठो के सिरे एक-दूसरे को स्पर्श करने लगते हैं।

हस्तमुद्राओ का महत्त्व

योगी जनो के मतानुसार उगलियो की ओर प्राणो का प्रवाह सबसे अधिक होता है और उगलियो के सिरो से उस प्रवाह का निष्कासन होता रहता है। उगलियो के परस्पर मिलाने से यह प्रवाह शरीर के केंद्रो को लौट जाता है।

आधुनिक शरीर रचना विज्ञान का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि मुख्य मस्तिष्क मे शरीर के सभी अगो के सचालन सबधी अलग-अलग केंद्र है। उनमे से उगलियो के सचालन सबधी केंद्र शरीर के अन्य अगो के आकार के अनुपात से अधिक व्यापक हैं।

इससे यह स्पष्ट होता है कि शरीर के अन्य अगो की तुलना मे स्नायु मडल का उगलियो से अधिक प्रभावी सबध है।

हस्तसामुद्रिक के अध्ययन से पता चलता है कि हाथ की प्रत्येक उगली किसी विशेष मानसिक तथा शारीरिक क्षमता का प्रतिनिधित्व करती है।

मैडिकल पामिस्ट्री के अनुसार अगूठा बौद्धिकता का, तजनी अहभाव (Ego) का, मध्यमा (दूसरी उगली) सौम्यता (Soberness) का, अनामिका (तीसरी उगली) रक्त-प्रवाह का, कनिष्ठिका (छोटी अतिम उगली) स्नायु तत्र का प्रतिनिधित्व करती है।

आकू पक्चर तथा आकू प्रेशर विद्या मे हथेली तथा उगलिया के अलग-अलग भागो का शरीर के अन्य अगो से सबध बताया गया है। इन सबके अधिक विवरण मे न जाकर उपर्युक्त जानकारी के आधार पर हम कह सकते हैं कि ऊपर बताई गई हस्तमुद्राए मन मस्तिष्क के अलग-अलग केंद्रो को शक्ति देने वाली हैं। उनका उद्देश्य मस्तिष्क के विद्युत्-प्रवाह को मस्तिष्क की ओर लौटाकर मस्तिष्क के केंद्रो मे सतुलन पैदा करना है।

भूमिका के रूप मे इतना कहने के उपरात अब ध्यान सबधी दोनो आसनो की विधि बताते हैं। पहले पद्मासन।

पद्मासन

इस आसन मे घुटने सुखासन की अपेक्षा अधिक मोडने पडते हैं और पाव के पजे की लचक भी बढानी पडती है।

विधि दोनो टागें फैलाकर रखें। दाया घुटना मोडकर एडी को बायी जघा के मूल पर लगा दें। तलुआ ऊपर की ओर दिखाई देता रहे।

फिर बाया घुटना मोडकर, बाये पाव की एडी को दायी जघा के मूल मे लगा दें। तलुआ ऊपर की ओर रहे।

दोनो टागो की स्थिति बदल-बदलकर यह आसन दोनो प्रकार से किया जा सकता है।

हाथो की चार प्रकार की जो मुद्राए पहले बताई गई हैं, उनमे से कोई एक मुद्रा इस आसन के लगाने के समय रखी जा सकती है। पाचवी मुद्रा यह भी हो सकती है कि बाया हाथ बायें घुटने पर रहे, दाया दायें घुटने पर। हथेलियो का रुख ऊपर की ओर हो।

रीढ की हड्डी 90 डिग्री के कोण मे अर्थात उत्थित अवस्था मे सीधी रहनी चाहिए। कुछ योगीजन ठोढी को यथासभव छाती से लगाने का निर्देश देते है और ध्यान नासिका के अग्र भाग पर केंद्रित करने का भी। कुछ योगीजन भौंहो के मध्य भाग पर ध्यान केंद्रित करने का निर्देश देते है। ये निर्देश पद्मासन की कोई आवश्यक शर्तें नही है।

आरभ मे यह आसन लगाते समय टागो और पिंडलियो मे दर्द का अनुभव होता है। ऐसी दशा मे आसन को खोलकर टागो को पसारकर आराम कर लेना चाहिए।

इस आसन का धीरे-धीरे अभ्यास बढाना चाहिए। आसन के सिद्ध होने के बाद व्यक्ति बिना किसी ओर ढलके देर तक सीधा बैठ सकता है।

इस अभ्यास से अन्य लाभ है —
काम भाव सतुलित रहता है।
पाचन सस्थान को बल मिलता है।
मन शात होता है।
टागो के गठिया से मुक्ति मिलती है।
कब्ज दूर होता है।
भूख बढती है।

सिद्धासन

इस आसन मे सर्वप्रथम बायी टाग के घुटने को मोडे। बायी एडी को मूलाधार के साथ लगाए। मूलाधार से आशय है मूत्र-अग तथा गुदा के मध्य का स्थान।

बायी एडी को मूलाधार से स्पश कराने के साथ बाये तलुए से दायी जघा के भीतरी भाग को स्पश कराए।

तत्पश्चात् दाया घुटना मोडकर दायें पैर को बायी पिडली पर इस प्रकार रखे कि दायें पाव के टखने का दबाव बाये पाव के टखने पर पडे और दायी एडी मूत्र-अग को स्पर्श करे।

आरभ मे दोनो टखनो का एक-दूसरे पर दबाव पडने पर दद का अनुभव होता है। इसलिए आरभ मे कुछ ही सेकेड यह आसन लगाए। बाद मे अभ्यास बढाते जाए।

रीढ की हड्डी 90 डिग्री के कोण से उत्थित अवस्था मे रखें। हाथो की स्थिति पहले बताई गई चारो हस्तमुद्राओ मे से किसी एक अवस्था मे रखे।

इस आसन से काम भाव नियत्रण मे रहता है और शरीर बिना

किसी ओर ढलके देर तक स्थिर रहता है। इस आसन से मानसिक शाति बनी रहती है। अजीर्ण दूर होता है। स्मरण शक्ति बढती है। हृदय रोग, श्वास रोग मे लाभ होता है।

ध्यान की उच्चतम अवस्था समाधि मे सिद्धासन और पद्मासन सहायक होते हैं। फिर भी इन आसनो को ध्यान लगाने की आवश्यक शर्त के तौर पर नही माना जा सकता।

जो व्यक्ति ये आसन सिद्ध न कर सकें वे सुखासन तथा अन्य सुविधानुसार बैठने की मुद्रा मे ध्यान कर सकते है।

ध्यान रहे

1 आसन खाली धरती पर कभी न करें, न ही अत्यत गुदगुदे बिछौने पर करे। चादर को तीन-चार तहो मे बिछाकर, उस पर आसन का अभ्यास करना चाहिए। मोटी दरी या सामान्य गलीचा बिछाकर भी आसन किया जा सकता है।

2 बैठने के सभी आसनो मे रीढ की हड्डी ऊपर की ओर सीधी होनी चाहिए। कमर को टेढा करके बैठना या ढुलककर बैठना उचित नही है।

3 ये दोनो आसन करते समय पलके मुदी रहनी चाहिए।

योगमार्ग पर चौथा पग

प्राणायाम

सास ही प्राण है।

सास हम सब लेते हैं किंतु सभी व्यक्ति नियमित सास नही लेते। सास को नियमानुसार अपनी इच्छा के अधीन कर उसे शरीर के निर्दिष्ट क्षेत्रों मे फैलाने-समेटने की क्रिया ही प्राणायाम है।

प्राणायाम योगसाधना का चौथा अग है। आसन सिद्ध होने के उपरात इस क्षेत्र मे प्रवेश करने का योगदर्शन मे उल्लेख है।

योग दर्शन मे प्राणायाम का लाभ यह बताया गया है कि इसके सिद्ध होने पर ज्ञान पर से आवरण हट जाता है तथा योग के छठे अग 'धारणा' के लिए मन मे अनुकूल वातावरण बन जाता है।[1]

प्रत्येक क्षेत्र की अपनी शब्दावली होती है। सामान्य भाषा मे सास लेने की क्रिया को श्वास कहते हैं। योग की शब्दावली मे इस

---

1. साधनपाद 52-53

क्रिया को 'पूरक' कहा जाता है। शरीर के आतरिक व्यापार के लिए बाहर की शुद्ध वायु को भीतर पहुचाने का कार्य श्वास द्वारा सपन्न होना है।

शरीर के आतरिक व्यापार मे प्रयुक्त होने से दूषित वायु का निष्कासन प्रश्वास या नि श्वास द्वारा किया जाता है। योग-शब्दावली मे यह क्रिया 'रेचक' है।

सास को जहा का तहा रोकने की क्रिया 'कुभक' कहलाती है। श्वास लेकर वायु को भीतर रोकना 'आभ्यतर कुभक' है तथा नि श्वास के उपरात वायु को कुछ समय के लिए भीतर न आने देना, बाह्य 'कुभक' है।

योगदर्शन मे इस विषय के सूत्र का अर्थ इस प्रकार है—

> बाह्य (रेचक) आभ्यतर (पूरक) स्तभवृत्ति (कुभक)। ये तीन प्रकार के प्राणायाम देश, काल, सख्या से परीक्षित दीर्घ, सूक्ष्म कहलाते हैं।[1]

यहा देश का अर्थ है साधक का वह अग जहा प्राणवायु को पहुचाना है।

'काल' का अर्थ है निर्दिष्ट स्थान पर स्वेच्छित समय के लिए प्राण को रोकने की क्षमता का होना।

'सख्या' शब्द काल की इकाई की ओर सकेत करता है।

हाथ को जघा के चारो ओर घुमाकर चुटकी बजाने मे जितना समय लगता है, योग के क्षेत्र मे काल की इस मात्रा को एक इकाई माना गया है।

आधुनिक घडियो के अनुसार योगशास्त्रियो ने अगले पृष्ठ पर अकित क्रम के अनुसार पूरक, कुभक और रेचक के सम्मिलित व्यापार को प्राणायाम की एक इकाई माना है।

---

1 साधनपाद 50

पूरक	12 सैकेंड
कुंभक	48 सैकेंड
रेचक	24 सैकेंड
कुल	84 सैकेंड

84 सैकेंड की इस इकाई को दुगुना, चौगुना, आठगुना इत्यादि करके प्राणायाम की क्षमता का विकास किया जाता है, किंतु समाधि की अवस्था तक पहुंचने के लिए इस इकाई का ज्यों-का-त्यों गुणा नहीं किया जाता बल्कि पूरक और रेचक तो 12 और 24 सैकेंड का ही रहने दिया जाता है, कुंभक की अवधि को 48, 96,192,384 सैकेंडों से आगे घंटों तक बढ़ाने का अभ्यास किया जाता है।

सैकेंडों की यह नाप योग के जिज्ञासुओं की सुविधा के लिए दी जाती है। साधक-जन घड़ी सामने रखकर साधना नहीं किया करते बल्कि वे बाहर की घड़ियों की बजाय अपने अंतर की घड़ी के आधार पर साधना करते हैं।

रेचक, पूरक और कुंभक, इन तीनों के अतिरिक्त चौथा प्राणायाम वह है जिसकी स्थिति में साधक को मात्रा और गणना का ज्ञान नहीं रहता है। उस प्राणायाम में साधक इष्ट चिंतन में इतना लीन हो जाता है कि प्राण की गति किस देश में कब स्थित (स्तंभित) हो गई, यह भी उसे ज्ञात नहीं रहता। इस अवस्था को समाधि का आरंभ माना जाता है।

प्राणायाम के सिद्ध अभ्यासी नाड़ी के स्पंदन तथा हृदय की गति को एक लंबे समय तक इच्छानुसार रोक सकते हैं तथा जब चाहे चला सकते हैं। शरीर के किसी भी भाग में वे प्राण को एकत्र कर सकते हैं और उसे प्राणों से शून्य भी कर सकते हैं। भूख, प्यास,

ग्रीष्म तथा शीतजयी अनेक प्रकार की प्राणायाम की विधिया हठ-योगियो की दिनचर्या का अग होती हैं किंतु सामान्य जनो के लिए ये मात्र कौतूहल का विषय बनी रहती है।

अनेक प्रकार के 'प्राणायाम' के विषय मे **श्री नारायण स्वामी** रचित 'प्राणायाम विधि' के कुछ अश यहा उद्धत कर रहे है।

प्राणायाम की सामान्य विधिया

प्राणायाम की विधिया जानने से पहले कुछ मुख्य बातें समझ लेनी चाहिए।

1 श्वास नाक से लेने का अभ्यास करना चाहिए। कुछ लोग मुह से श्वास लिया करते है, यह अभ्यास हानिकारक है।
2 गहरी श्वास लेने की आदत डालनी चाहिए।
3 मुह ढककर किसी ऋतु मे भी नही सोना चाहिए। शुद्ध वायु श्वास के द्वारा फेफडे तक पहुचने के लिए सोते समय भी नाक सदैव खुली रखनी चाहिए।
4 प्राणायाम शुद्ध और शात स्थान मे करना चाहिए, जहा वायु मे धूलि-धुआ आदि हानिकारक वस्तुए शामिल न हो।
5 भोजन भूख से कुछ कम करना चाहिए, जिससे अजीर्ण न होने पाए।
6 रोगी होने की दशा मे प्राणायाम नही करना चाहिए।

अब हम यहा केवल उन्ही पाणायामो के अभ्यास की रीति बतलाएगे, जो सभी के लिए उपयोगी हो। ऐसे प्राणायाम की बात नही कहेगे, जो योग की ऊची अवस्था प्राप्त कर लेने पर ही किए जाते हैं।

सामान्य प्राणायाम

पद्मासन या किसी आसन मे जिससे सुखपूर्वक उस समय तक (बिना आसन बदले) बैठ सकें, जितनी देर क्रिया करनी इष्ट है, बैठ जाए। इस प्रकार बैठें कि छाती, गला और सिर ये तीनो एक सीध मे रह।

धीरे-धीरे नाक की राह से श्वास बाहर निकाले (रेचक) और उसे बाहर ही रोक दे (बाह्य कुभक)। जब अधिक देर बिना श्वास लिए न रह सके तो धीरे धीरे पूरक करे (श्वास भीतर खीचे) और अब श्वास को भीतर रोक दे (आभ्यतर कुभक)।

जब अधिक समय कुभक न कर सके तो धीरे-धीरे रेचक कर।

इस प्राणायाम से रेचक, पूरक और कुभक अर्थात् प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया का अभ्यास होता है, जिससे आगे के प्राणायामो के करने की शक्ति आती है। इस प्राणायाम का अभ्यास बढाना चाहिए, परतु यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रसन्नता से जितनी देर श्वास रुक सके, रोकें। चित्त को परतत्र नही करना चाहिए। अभ्यास से उत्तरोत्तर बाहर और भीतर दोनो ओर श्वास रोकने की अवधि स्वयमेव बढती है।

फेफडो के समस्त कोषो मे वायु भरने का प्राणायाम

पद्मासन अथवा किसी आसन, जिसम आप सुखपूवक अत तक बैठ सक, बैठे और नथुनो से धीरे-धीरे श्वास के द्वारा शुद्ध वायु भीतर की ओर खीचने लगे। पहले फेफडे से नीचे के भाग को भरे और प्रबल इच्छा रखे कि फेफडे का अधोभाग वायु से भर रहा है। पेट कुछ फूलेगा।

इसके बाद उसी श्वास से फेफडे के मध्य भाग मे वायु पहुचाए (इस क्रिया तथा आगे की समस्त क्रियाओ के साथ इच्छा शक्ति

का प्रयोग आवश्यक है)। इस क्रिया से पेट कुछ भीतर सुकडेगा, छाती कुछ उभरेगी। इसके बाद श्वास के तीसरे और अंतिम भाग से फेफडे के ऊपरी भाग को भरें। इस क्रिया को प्रारंभ करने से पहले कधो को कुछ ऊपर उठा लें। इन तीन क्रियाओ से पूरक होता है। इसे पूरा होने मे लगभग आधा मिनट लगता है।

इसके बाद कुभक करें। एक मिनट से कुछ अधिक अथवा कम-से-कम एक मिनट तक वायु को भीतर रोके। इसके साथ इच्छा यह हो कि फेफडो के समस्त कोप वायु से भर रहे हैं।

फिर रेचक करके वायु को बाहर निकालें।

विशेष अभ्यास के काल मे कई प्राणायाम एकसाथ करने होगे, परतु लगातार नही किए जा सकते। एक प्राणायाम के बाद दो-चार श्वास लेकर तब दूसरा, इसी प्रकार तीसरा और चौथा करना चाहिए।

थकान दूर करने के लिए 'सुखद प्राणायाम'

सामान्य प्राणायाम करने से थकान पैदा होती है। उसे दूर करने के लिए यह 'सुखद प्राणायाम' करें।

जितनी देर तक सहज हो, नाक से पूरक और कुभक करें। मुह से रेचक करें। मुह की स्थिति ऐसी करे, जैसे सीटी बजाते हुए होती है। वेग से तीन से अधिक बार में थोडा-थोडा श्वास बाहर निकाले। एक बार निकालने के बाद कुछ रुक जाए। इसी प्रकार कुछ रुक-रुककर प्रत्येक बार बलपूर्वक श्वास बाहर निकालें।

ध्यान रहे किसी भी प्राणायाम का अभ्यास करें, अत मे 'सुखद प्राणायाम' सदैव कर लें। इससे आराम मिलता है, सब थकान दूर हो जाती है।

पेट और आत को हवा से भरने का प्राणायाम

बाया पैर दाहिनो जाघ पर रखें, गर्दन और पीठ को सीधा

रखें। हथेलियों को घुटनो पर रखकर मुह बद कर लें।

दोनो नथुनो से धीरे-धीरे परतु शीघ्रता से पूरक करें और विना कुभक किए ही रेचक करें।

यह बात याद रखनी चाहिए कि भोजन तब तक नही पचता जब तक उसका प्रत्येक कण ऑक्सीजन के भीतर न घुल जाए, इसलिए आमाशय और आतो मे भी पर्याप्त मात्रा मे वायु रहनी चाहिए।

इस प्राणायाम का अभ्यास हो जाने पर इसको करने से साधारण ज्वर दूर किया जा सकता है और यदि समय पर भोजन न न मिले, तो इस प्राणायाम को भूख ही मे कर लेने से कुछ देर मनुष्य भूख के कष्ट से भी बच सकता है।

यह अभ्यास निरतर करते जाए, जब तक थक न जाए अथवा पसीना न आने लगे।

अभ्यास करते समय दृष्टि नासिका के अग्रभाग पर रखें। थक जाने पर दाहिने नथुने से पूरक करके कुभक करें और फेफडो को वायु से खूब भर लें। इसके बाद बायें नथुने से रेचक करके अभ्यास समाप्त कर दे।

शक्ति प्राप्त करने और स्थिर रहने के लिए प्राणायाम

पद्मासन मे बैठें। मलेंद्रिय को रुई से खूब भर दें।

दाहिने नथुने से पूरक करें।

अपनी ठोडी को छाती पर रखकर दायें हाथ से बायें पैर के अगूठे को और बायें हाथ से दायें पैर के अगूठे को पकडें और कुभक करें।

बाये नथुने से रेचक करें।

दूसरे प्राणायाम मे बायें नथुने से पूरक और दायें नथुने से रेचक करना चाहिए।

यह अभ्यास क्रमश बढाते हुए एक घटे तक ले जाना चाहिए।

रक्त-सचालन को नियमित करने का प्राणायाम

रक्त-सचार की क्रिया को नियमित करने और विचार-शक्ति की वृद्धि के लिए पहले पद्मासन मे बैठे। दाहिने हाथ से दाहिने पैर और बाये हाथ से बाये पैर के अगूठे को पकडें।

बायें नथुने से पूरक करे। फिर कुभक करें। फिर दाहिने नथुने से पूरक करे और बायें नथुने से फिर धीरे-धीरे रेचक करे। इसी प्रकार आगे के प्रत्येक प्राणायाम मे रेचक और पूरक का क्रम बनाते जाना चाहिए।

पसीना आने पर यह अभ्यास बद कर देना चाहिए।

स्मृति एव इच्छा-शक्ति वर्धक प्राणायाम

बायें पैर की एडी मलेंद्रिय पर और दाहिने पाव की एडी बायें पैर की जघा पर रखे और ठोडी को छाती से लगाए, आखे बद रखे।

गहरा और लवा श्वास लेकर रेचक करें। फिर कुभक और उसके वाद रेचक कर डाले।

यह अभ्यास बढाते वढाते एक घटे तक ले जाए।

शीत से बचने के लिए प्राणायाम

बाया पाव मलेंद्रिय के नीचे रखें और ठोडी छाती पर। दोनो हाथो से वढाकर सीध मे फैले हुए दाहिने पाव को पकड ले और माथे को दाहिने घुटने मे लगा दे।

वाय नथुने से पूरक करके फेफडो को वायु से भर दें।

दृष्टि को नासिका के अग्र भाग पर जमाकर कुभक करें। फिर दाहिने नथुने से रेचक करें।

एक घटा अभ्यास करने से पसीना आ जाता है और रक्त

गति बढ जाती है। पसीना आने पर अभ्यास बद कर देना चाहिए।

दातो के रोग दूर करने और शरीर पुष्ट करने के लिए प्राणायाम

बाया पैर दाहिनी जघा पर और दाहिना पैर बायी जघा पर रखे और दाहिने हाथ से दाहिने पैर और बाये हाथ से बायें पैर के अगूठे को पकडे।

पूरक मुह से इस प्रकार करे कि दातो की पक्तिया भी श्वास लेने मे सहायक हो और 'सी सी' की आवाज के सदृश ध्वनि होने लगे।

कुभक करके दोनो नथुनो से धीरे-धीरे रेचक करे। अभ्यास बढाते हुए 45 मिनट तक ले जाना चाहिए।

शरीर मे गर्मी की मात्रा बढाने के लिए प्राणायाम

सिद्धासन मे बैठकर दोनो नथुनो से पहले पूरक, फिर धीरे-धीरे रेचक करें। पुन पहले से कुछ तेजी से पूरक करे और फिर रेचक।

इसी प्रकार पूरक का वेग कम करते या बढाते जाए, जिससें श्वास लोहार की धौंकनी की तरह चलने लगे।

पसीना आने पर अभ्यास बद कर दे।

इस प्राणायाम के निरतर अभ्यास से शरीर के जोडो और पिंडलियो का दर्द भी जाता रहता है। अभ्यास बढाकर एक घटे तक ले जाना चाहिए।

जिह्वा, तालु, नाक, कान और कठ को नीरोग रखने के लिए प्राणायाम

पद्मासन मे शातिपूर्वक बैठ जाए।

जिह्वा की नोक तालु से लगाए फिर मुह से पूरक करें। समस्त शरीर को ढीला छोडते हुए कुभक करें। नाक से रेचक करें।

अभ्यास वढाकर 45 मिनट तक ले जाए ।

ब्रह्मचर्य के लिए सहायक प्राणायाम

चित लेट जाए और कानो को रुई से वद कर लें जिससे वाहर का कोई शब्द न सुनाई दे । नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाए ।

आधा घटा तक इस स्थिति मे रहे, रुक-रुककर गहरा श्वास लेते रहे ।

फिर आखो की पुतलियो को ऊपर चढाए और भौंहो के मध्य दृष्टि जमाए । ऐसा करने से आखे वद होने लगेंगी, उन्हे वद हो जाने दे ।

इस क्रिया के अभ्यास से कुभक करने की शक्ति वढती है, चित्त एकाग्र रहता है और इद्रियो का निग्रह होता है ।

इस स्थिति मे अधिक रहने से भीतर के शब्द सुनाई देने लगते हैं, जिन्हे कवीर आदि महापुरुषो ने 'अनहद' शब्दनाद कहा है ।

ध्यान रहे

प्राणायाम की ये विधिया इस विषय के अनुभवी जन की देख-रेख मे करनी चाहिए । जो जन स्वय को ये विधिया करने के योग्य नही पाते वे अच्छे स्वास्थ्य के लिए इतना तो कर सकते है कि सास को नियमित करे ।

नियमित सास नाक द्वारा लिया और छोडा जाता है । गहरे श्वास-नि श्वास शरीररूपी भवन के हर कोने को ऑक्सीजनयुक्त करते हैं । अत छोटे-छोटे अधिक श्वास-नि श्वास की वजाय गहरे सास की आदत डालनी चाहिए ।

गहरी सास लेते समय छाती सामान्यत फूलती है । योगीजनो का निर्देश है कि सास भरते समय पेट भी फूलना चाहिए और सास

छोडते समय पेट पिचकना चाहिए।

एक निर्देश यह भी है कि आगे की ओर झुकते समय सास छोडी जानी चाहिए और पीछे की ओर झुकते समय सास भरी जानी चाहिए।

जो जन अन्य कठिन प्राणायाम नही कर सकते वे सास लेने और छोडने की यह विधि अपनाकर तन और मन से स्वस्थ रह सकते हैं। ●

योगमार्ग पर पाचवा पग

प्रत्याहार

योगमार्ग की यात्रा के पाचवें पडाव 'प्रत्याहार' के विषय मे योगदर्शन मे ये सूत्र आए है।

इद्रियो का अपने विषयो का त्याग करके चित्त के अनुकूल होना प्रत्याहार है। प्रत्याहार के सिद्ध होने से इद्रियो पर योगी का आधिपत्य हो जाता है। इद्रियो का अपने विषयो से रहित होना योगी की परमावश्यकता है।[1]

भारतीय शास्त्रो मे वर्णित इद्रियो तथा उनके विषयो की चर्चा करने से पूर्व पाच तत्त्वो अथवा पच महाभूतो का परिचय प्राप्त करना आवश्यक है।

पाच तत्त्व अथवा पच महाभूत

ये पाच तत्त्व हैं—आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी। भारतीय दर्शन इन्हे मूल तत्त्व कहता है किंतु आधुनिक भौतिक

1 साधन-पाद 54-55

विज्ञानी मूल तत्त्व (Element) उस पदार्थ को मानते हैं जिसे किसी भी रासायनिक विधि से सरलतर पदार्थ मे विश्लेषित नही किया जा सकता। दूसरे शब्दो मे मूल तत्त्व वह है जो यौगिक (Compound) नही है।

आधुनिक भौतिक विज्ञान ने अब तक 103 मूल तत्त्वो की खोज की है। उनकी दृष्टि मे आकाश तो कोई तत्त्व ही नही ठहरता और शेष चार तत्त्व यौगिक सिद्ध होते हैं। कुछ पश्चिमी विद्वान् 'ईथर' को ही 'आकाश' तत्त्व मानते है।

'ईथर' ही आकाश है या आकाश तत्त्वहीनता की स्थिति का नाम है, इस विषय पर अभी अन्वेषण चल रहा है किंतु प्राचीन भारतीय तत्त्वज्ञ पाच तत्त्वो का वर्गीकरण पाच ज्ञानेंद्रियो की सवेदन क्षमता के आधार पर करते रहे है। आत्मा को जिस तत्त्व का बोध शरीर के जिस सवेदनशील अग (इद्रिय) के माध्यम से होता है, उस तत्त्व को उस इद्रिय का विषय माना गया है। प्रत्येक तत्त्व के गुण तथा उससे सबधित इद्रिय के विषय इस प्रकार हैं

पाच तत्त्वो से सबधित इद्रिया

प्रथम तत्त्व 'आकाश' है। आकाश का गुण 'शब्द' है। शब्द कान नामक ज्ञानेद्रिय का विषय है। आकाश को सूक्ष्मतम प्राथमिक तत्त्व माना गया है।

दूसरा तत्त्व 'वायु' है। इसका गुण 'स्पश' है। स्पश त्वचा नामक ज्ञानेंद्रिय का विषय है। वायु मे आकाश तत्त्व भी सम्मलित है।

तीसरा तत्त्व 'अग्नि' है। इसका गुण 'रूप' है। रूप नेत्र नामक ज्ञानेंद्रिय का विषय है। 'अग्नि' आकाश, वायु और अग्नि तत्त्व के सयोग से प्रकट होती है।

चौथा तत्त्व 'जल' है। इसका गण 'रस' है। रस 'रसना'

नामक ज्ञानेंद्रिय का विषय है। जल मे पूर्वोक्त तीनो तत्त्व आकाश, वायु तथा अग्नि सम्मिलित रहते हैं।

पाचवा तत्त्व 'पृथ्वी' है। इसका गुण 'गध' है। गध नासिका नामक ज्ञानेंद्रिय का विषय है। पाचो तत्त्वा मे पृथ्वी को स्थूलतम तत्त्व माना गया है क्योकि इसमे उपर्युक्त चार तत्त्वो का समावेश है।

कर्मेंद्रिया पाच है

पाद, हस्त, वाक्, गुदा तथा उपस्थ (जननेंद्रिय)।

'जिह्वा' नामक अग 'रसना' के नाम से ज्ञानेंद्रिय है तथा 'वाक्' के रूप मे कर्मेंद्रिय है।

रसना से आशय है जिह्वा तथा उसके आसपास मुख के भीतरी मडल मे विद्यमान स्वाद-केंद्र। ये केद्र प्रकटत निष्क्रिय रहकर आहार ग्रहण के समय अथवा आहार प्रतीक्षा मे रस स्रवित करते हैं। इसलिए रसना को ज्ञानेद्रियो म माना गया है।

वाक् का सवध जिह्वा की गतिशीलता से है। जिह्वा के अलग-अलग क्षेत्र कठ, तालु, मूर्द्धा, दत और ओष्ठ नामक क्षेत्रो को स्पर्श करके स्वरो को अलग अलग रूप देते है। इसलिए वाक का कर्मेंद्रियो मे गिना गया है।

जिस प्रकार जिह्वा ज्ञानेंद्रियो और कर्मेंद्रियो का मिलन-विंदु है, लगभग इसी प्रकार की स्थिति 'उपस्थ' की भी है।

स्पश त्वचा का विषय है किंतु त्वचा से तो हाथ-पाव सहित पूरा शरीर मढा हुआ है। पूरे शरीर मे 'उपस्थ' अर्थात जनन-अग ही एक ऐसा अग है जहा स्पर्शानुभूति सर्वाधिक होती है अत उपस्थ कर्मेंद्रिय होने के साथ स्पश की दृष्टि से व्यापक त्वचा मडल का प्रतिनिधि भी है।

अपने स्वामी आप

इद्रियो के इन विपयो मे आसक्त व्यक्ति विना पतवार के नाव की भाति ससार रूपी सागर मे थपेडे खाता डोलता रहता है।

ऐसा व्यक्ति यदि सारे ससार का अधिपति हो जाए तो भी अपनी इद्रियो का दास बना रहता है ।

व्यक्ति अपना स्वामी स्वय बन सके, इसका उपाय योगदर्शन मे सुझाया गया है कि इद्रियो को उनके विषयो से विमुख कैसे किया जाए ।

शास्त्र ने यह सुझाव योग की उच्चतर साधना के सदभ मे दिया है किंतु जो व्यक्ति योग के ऊचे क्षेत्र मे प्रवेश नही भी करना चाहता, वह भी यदि अपनी इद्रियो का स्वामी स्वय बन सके तो अधिक सफल, अधिक सुखद जीवन व्यतीत कर सकता है ।

इद्रियजित् व्यक्ति का व्यवहार उन महानुभावो से अलग प्रकार का होता है जो अपनी इच्छा के विपरीत कुछ भी होने पर घबरा जाते हैं, आपे से बाहर हो जाते हैं । वे ग्रीष्म ऋतु मे गर्मी की शिकायत करते हैं, सर्दी मे शीत की और वर्षा ऋतु मे कभी कम वर्षा की और कभी अधिक वर्षा की । निश्चित समय पर पान, सिगरेट, चाय या अन्य किसी तलब की पूर्ति न होने पर वे बेहाल हो जाते है । ये लोग अपनी इद्रियो के स्वामी स्वय नही हैं अपितु इद्रियो के फेर मे पडा डावाडोल मन ही उनका स्वामी होता है । इद्रियो के सुख की तलाश मे भटकते ऐसे व्यक्ति वास्तविक सुख और शाति से सदैव वचित रहते हे ।

जो व्यक्ति इद्रियो के विषयो से विमुख होना चाहते है, दूसरे शब्दो मे जो इद्रियो के आधिपत्य से मुक्ति पाना चाहते हैं, उनके लिए भी सरल उपाय ज्ञानी जनो ने सुझाए हे । उनके अनुसार चलकर कोई भी व्यक्ति अपने मन को सरलतापूवक वश मे कर सकता है ।

इनमे से कुछ उपाय यहा दे रहे है, जिन्हे अभी से व्यवहार मे लाकर आप एक ही मास मे इसका लाभ स्वय देख सकते है ।

मन को वश मे करने की सरल विधि

प्रथम सप्ताह मे, जो अभी से आरभ हो रहा है, आप प्रत्येक दिन अपनी किसी एक मनपसद वस्तु का केवल एक दिन के लिए त्याग करें। वह वस्तु चाय, दूध, दही, घी, फल, तरकारी, गेहू, चावल, दाल, मास, अडा, नमक, मीठा, खट्टा, शराब, पानी आदि मे से कोई ऐसी वस्तु होनी चाहिए जिसका सेवन आप नियमित रूप से करते है। जिस वस्तु का सेवन आप कभी-कभी करते है, उसके त्याग करने का कोई महत्त्व नही है। इसलिए नियमित व्यवहार की वस्तुओ मे से किसी एक का केवल एक दिन के लिए त्याग करना आवश्यक है।

दूसरे सप्ताह मे एक खाद्य पदार्थ के त्याग के साथ एक मानसिक त्याग भी शामिल कर ले। उदाहरणत किसी एक प्रात को जागते ही यह निश्चय कर ले कि चाहे आज कुछ भी हो जाए, क्रोध नही करेगे अथवा आज अभिवादन के लिए किसी से हाथ नही मिलाएगे, बल्कि अभिवादन का कोई अन्य उपाय बरत लेंगे।

किसी दिन यह निर्णय कर लें कि आज किसी के भी कार्य मे कमी होने पर उसकी शिकायत नही करेंगे। पीने के लिए ठडे की बजाय गर्म पानी आ गया या चाय ठडी परोसी गई तो उसे सहज भाव से स्वीकार कर लेंगे। बत्ती चली गई या पखा बद हो गया तो उसका हल भी सहज भाव से निकाल लेंगे। या सामान्य रुचि के प्रतिकूल भोजन परोसे जाने पर उसका बिना शिकायत के सेवन कर लेंगे। नमक या मीठा कम होगा तो दोबारा नही मागेगे। अधिक होगा तो बिना शिकायत के ग्रहण करेंगे।

इस ग्रहण का अर्थ यह न समझें कि धार्मिक दृष्टि से या स्वास्थ्य की दृष्टि से जो आपके लिए निषिद्ध है, उसे आप स्वीकार करें।

इस प्रकार प्रत्येक प्रात कोई भी प्रण करके पूरे दिन उसका

पालन करे। इस प्रण का भेद अपने तक सीमित रखने से इसका पालन करने मे सुविधा रहेगी।

ये उपाय आरभिक दो सप्ताह तक निभाने मे कठिनाई होगी तत्पश्चात धीरे-धीरे आपको इस प्रकार के त्याग मे रस मिलने लगेगा और एक मास के उपरात आप देखेंगे कि आपके जीवन की पतवार इद्रियो के हाथ से निकलकर आपके हाथो मे आ गई है। आपके अदर एक ऐसी प्रज्ञा जाग्रत हो गई है जो उचित-अनुचित का निर्णय करके आपको गलत राह से बचाती है। आपकी स्मरण शक्ति तेज हुई है और इच्छाशक्ति प्रबल हो गई है। साथ ही यह भी कि अब योग के अतरग अगो—धारणा, ध्यान और समाधि मे प्रवेश करना आपको अपेक्षाकृत सरल लगने लगा है।

यदि आप योग के उच्चतर क्षेत्र मे न भी जाना चाहे तो भी योग की परम उपलब्धि 'ब्रह्म' स्वरूप होने के लिए पहले की अपेक्षा अधिक योग्य हो गए है।

गीता मे श्रीकृष्ण ने ब्रह्म मे स्थित व्यक्ति तथा कर्म-बधन-मुक्त व्यक्ति के लक्षण इस प्रकार कहे है

जो प्रिय वस्तु को पाकर प्रसन्न न हो, अप्रिय को पाकर उद्वेग को न प्राप्त हो, वह निश्चय-बुद्धि, मोहरहित ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म मे स्थित है। 5/20

अपने आप जो वस्तु मिले, उसी मे सतुष्ट, शीत-उष्ण आदि द्वद्व पदार्थों के क्लेश को न मानने वाला, मत्सर से रहित, अर्थ की सिद्धि और असिद्धि मे एक सा रहने वाला पुरुष कर्म करके भी बधन को नहीं पाता। 4/22

ध्यान की सहज विधि
विपश्यना

मन पर अंकुश लगाकर उसे एकाग्र करने की विधियां अनेक योगीजनों द्वारा बताई गई हैं, किंतु 'विपश्यना' मन को मित्र बनाकर उसे एकाग्र करने की विधि है।

विषय-प्रवेश

मन की चचलता का वखान अकसर हम सुनते रहते है और चचल मन को वश मे लाने के उपाय भी हमारे गुरुजन हमे सुझाते रहते है। कभी जप द्वारा, कभी गुरुमन्त्र अथवा नाम द्वारा, कभी त्राटक विधि द्वारा, किंतु ज्यो-ज्यो मन को वश मे लाने व मन को एकाग्र करने का हम प्रयत्न करते हैं त्यो-त्यो उसकी चचलता, उसकी गतिशीलता वढती दिखाई देती है। उससे जुझारू रूप से लडने का प्रयास करते हुए हम अपनी शक्तियो का अपव्यय कर वैठते है।

यदि हम यह स्वीकार कर लें कि चचलता मन का दोष नही वल्कि गुण है तो मन से युद्ध छेडने का हमारा आधार ही नही रहता।

मन की चचलता हमारी कल्पनाशीलता और हमारे सामान्य ज्ञान के विस्तार पर निर्भर है। हमारी ज्ञान सीमा ही हमारे मन की उडान-सीमा का कारण वनती है।

चचल मन पर ग्लानि का अनुभव न करें

उदाहरणत एक सीमित ज्ञान वाले व्यक्ति को एक पसिल देकर उस पर ध्यान टिकाने का उसे निर्देश दिया जाए तो वह

पेंसिल पर अपना मन केंद्रित करने मे शीघ्र सफल हो जाएगा। किंतु दूसरा व्यक्ति, जिसके सामान्य ज्ञान का दायरा पहले व्यक्ति की अपेक्षा अधिक विस्तृत होगा, उसका ध्यान बार बार पसिल से हटेगा। पेंसिल सबधी देखे-अनदेखे अनेक प्रश्न उसके मन को बार-बार पेंसिल के आकार से हटाकर उसे कभी पेंसिल उद्योग के काम मे आने वाली लकडी के जगलो मे ले जाएगे, कभी उसके आविष्कार सबधी इतिहास के पन्ने उसके सामने खुलेंगे, कभी उसका मन पेंसिल की आयात-निर्यात नीति पर विचार करते हुए अथशास्त्र से सबधित विषयो मे जा उलझेगा। इस प्रकार के अनेक विचार उसके मन को पसिल के आकार से हटाने का कारण बनेगे और वह कल्पनाशील व्यक्ति एकाग्रता सबधी प्रतियोगिता मे अपने से अल्पज्ञानी के सामने स्वय को हीन महसूस करता रहेगा।

ऐसे मनस्वी को एकाग्र होने के लिए बेशक अधिक साधना करनी पडेगी किंतु उससे प्राप्त होने वाली उपलब्धिया भी उसे अपेक्षाकृत अधिक सुलभ होगी। **दिव्यद्रष्टा वे ही होते हैं जिनके पास सामान्य ज्ञान की आधारभूत राशि सामान्य जनो से अधिक होती है।**

मन की चचलता को दोष माने जाने की पृष्ठभूमि मे वास्तविक कारण यह रहा है कि हम मन को किसी स्थिर आकार पर एकाग्र करने मे प्रयत्नशील रहे हैं। यदि व्यक्ति मन की चचल प्रकृति के अनुकूल किसी गतिमान वस्तु पर ध्यान केंद्रित करे तो उसके एकाग्र होने की सभावना बढ सकती है।

लगभग ढाई हजार वष पूर्व गौतम बुद्ध ने मनन करके अपने भीतर के साक्षात्कार का माग आना-पाना अर्थात् सास की आवा-जाही का निरीक्षण बताया था। बाद मे यही विधि 'विपश्यना' पद्धति के नाम से प्रचलित हुई।

बौद्ध मठो मे इस विधि का अभ्यास हजारो वर्षो से हो रहा

है। किंतु इस विधि को आज के युग मे प्रचलित करने का श्रेय इगतपुरी (महाराष्ट्र) के श्री सत्यनारायण जी गोयनका को है।

विपश्यना पद्धति को एकाग्रता का सरल उपाय समझते हुए, इसकी अनुभूत विधियो का सार यहा प्रस्तुत कर रहा हू।

समी। धर्मो से मन का मेल कराए

सास के निरीक्षण द्वारा अपने निरीक्षण की यह विधि एकाग्रता की अन्य विधियो की अपेक्षा अधिक सहज इसलिए है कि यह हमारे मन को उसकी रुचि के अनुकूल विषय पर लगाने का उपाय सुझाती है। किसी निराकार इष्ट अथवा अनसमझे शब्द-समूह (मत्र) की अपेक्षा गतिमान सास का निरीक्षण गतिशील मन के लिए अधिक प्रिय विषय हो सकता है।

विपश्यना का अर्थ है यथार्थ ज्ञान। सास आ रही है, जा रही है। किंतु हमने इस ओर कभी ध्यान ही नही दिया। अपना शरीर भी देखा-भाला है। इसे भी हमने विचारयोग्य कभी नही समझा। फलस्वरूप हमारे अतर मे जो दुनिया छिपी बैठी है उससे हम अनभिज्ञ रहे हैं। सास के माध्यम से अपने अतर मे झाकना अधिक सरल है।

प्रतिदिन 30 मिनट प्रात और 30 मिनट साय इस विधि का अभ्यास करके तीन सप्ताह मे इस साधना का वाछित लाभ उठाया जा सकता है।

प्रथम सप्ताह की अभ्यास-विधि

किसी शात स्थल पर आराम से चटाई पर पद्रह मिनट के लिए बैठ जाइए। किसी विशेष आसन मे बैठने का आग्रह नहीं है। आख बद कर लीजिए और सास के आने-जाने पर ध्यान दीजिए।

आप पाएगे कि आपका ध्यान बार-बार सास से हटकर दूसरे विषयो की ओर जा रहा है। वे विषय घर के, काम-काज के तथा अन्य प्रकार के हैं। जब मन की उडान के दौरान आपको यह ध्यान आ जाए कि आप तो सास की आवाजाही को देख रहे थे, उसी क्षण पुन मन को सास पर ले आए।

सास को नियमित करने की भी जरूरत नहीं है। सास तेज आ रही है या धीमी, इसकी सामान्य गति मे बाधा नही डालनी है।

सास का सही मार्ग है नाक। किंतु कभी-कभी जुकाम के कारण नाक बद रहती है तो सास मुह से ली जाती है। ऐसी स्थिति मे मुह से आने-जाने वाली सास पर ध्यान करना चाहिए। लेकिन यह समझौता ज्यादा देर तक करना उचित नही है। नाक से सास लेने का अभ्यास करना चाहिए।

आसन की एक मुद्रा मे बैठे-बैठे थक जाए तो बैठने की मुद्रा बदल लीजिए किंतु आखें बद रखिए।

सास के अवलोकन से मन उचाट होने लगे तो आख खोलकर याद कीजिए कि आपका मन सास से कितनी बार भटका। एकाध मिनट के विश्राम के बाद आप पुन पूर्वोक्त अभ्यास कीजिए। इस अवधि के पश्चात् पुन मन की उडान का लेखा-जोखा कीजिए।

मन की उडान स्वय देखें

इस अभ्यास से आपको यह ज्ञात होगा कि आख बद करने से मन की उडान की क्षमता बढ जाती है। जब आपकी आखें खुली रहती है तो आपकी दृष्टि-सामा मे जो कुछ है, मात्र वही दिखाई देता है। किंतु जब आप आखे बद कर लेते हैं तो आपकी दृष्टि-सीमा असीम हो जाती है। आपने जो कुछ कभी भी देखा, भोगा या सोचा होता है, वह आपके कल्पना-चक्षुओ के सामने आता रहता है और आप आश्चर्यचकित रह जाते है कि आप कुछ ही मिनट की अवधि मे कितनी बार कहा कहा से हो आए।

सायकाल भी उपर्युक्त अभ्यास करें। **मन पर कोई दबाव न डालें।** सहज विधि से मन की उडान को देखे और जब भी वह थककर लौटे उसे सास की आवाजाही पर टिकाए।

अपनी ध्यान-प्रगति जानने के लिए अगले दिन ध्यानस्थ होने मे पूर्व कागज पेसिल अपने पास रख लें। अब आपको मन की उडानो का हिसाब रखना है। पद्रह मिनट के अभ्यास के दौरान आपका मन कितनी बार सास से हटा है, वह सख्या आप नोट कर लें।

अभ्यास के दौरान मन अनेक बार सास से हटेगा। वह कब हटता है, इसका साधक को उस समय आभास नही होता बल्कि वह जब एक यात्रा पूरी करके पुन लौटकर आता है, तभी उसको

ज्ञात होता है कि अभी-अभी मन भटका था। उसके लौटने के उपरात अब इसे पुन सास के निरीक्षण पर लगाए।

अगले पाच दिनो तक इसी प्रकार नोट करते रहने से आपके सामने मन की कल्पना-क्षमता का लेखा-जोखा आ जाएगा। यदि आपकी मानसिक उडानो मे प्रतिदिन उत्तरोत्तर कमी आई है तो इससे विदित होता है कि आपमे एकाग्रता की योग्यता बढ रही है। यदि कमी नही हुई, अथवा वृद्धि हुई है तो भी चिंता की कोई बात नही, ना ही मन की चचलता पर ग्लानि अनुभव करने की जरूरत है। सिफ उपर्युक्त अभ्यास को तब तक जारी रखने की जरूरत है जब तक मानसिक उडानो की सख्या उत्तरोत्तर कम नही होती जाती है।

खुद ही गुरु, खुद ही चेला

पूरा एक सप्ताह नियमित रूप से सास-अवलोकन का अभ्यास आवश्यक है। आप स्वय ही शिक्षक हैं, स्वय ही विद्यार्थी। इसलिए अपनी किसी चूक का प्रायश्चित्त भी स्वय करे। यदि किसी दिन अभ्यास से चूक जाए तो उसका प्रायश्चित्त यह करे कि अगले दिन दो की बजाय चार बार यह अभ्यास करें।

जो व्यक्ति अब तक तन से बाहर की दुनिया को ही सब कुछ मानता रहा है, उसे आरभ मे यह सारा अभ्यास एक बबाल सा लगेगा। सास-अवलोकन करने की यह क्रिया निरथक-सी लगेगी। बिलकुल वैसे ही जैसे टाईप राईटिंग सीखने वाले शिक्षार्थी को की-बोड (Key Board) पर नजरें टिकाए निरर्थक शब्दो या वाक्यो का अभ्यास करना। किंतु जिसे यह विश्वास होता है कि वह एक दिन सार्थक पक्तिया बिना 'की-बोर्ड' देखे टाईप कर सकेगा, वह अभ्यासकाल की शुष्कता मे भी हताश नही होता। अत इस अभ्यास मे भी अगले चरण तक वे ही पहुचेंगे जिन्हे यह विश्वास

है कि तन के भीतर भी एक दुनिया है जिसमे भयानक और मनोरम सभी प्रकार के दृश्य हैं ।

प्रथम सप्ताह मे अपनी ध्यान-क्षमता की प्रगति की जाच भी बीच बीच मे करते रहना चाहिए। अपनी जाच इस प्रकार करे

यदि ध्यान के उपरात आख खोलने पर आप देखते हैं कि अभी तो पद्रह मिनट की वजाय पाच ही मिनट व्यतीत हुए हैं तो इससे स्पष्ट है कि आप सास मे डूबे नही है। अत आपका सास-निरीक्षण का अभ्यास काल एक सप्ताह से बढेगा ।

यदि आप आखे खोलने पर पाते है कि पद्रह की वजाय बीस मिनट निकल गए है तो आप अपनी मजिल पर अपेक्षाकृत जल्दी और निश्चित पहुचेंगे किंतु अपनी विशेष क्षमता का अर्थ यह बिलकुल न ले कि आप प्रथम सप्ताह के अभ्यास को फलागकर अगले सप्ताह का अभ्यास यह सप्ताह पूरा होने से पूव कर सकते है ।

अपने सामने अपनी अपराध स्वीकृति

प्रथम सप्ताह के श्वासावलोकन के दौरान आपके स्मृति-पटल पर मनोरम की अपेक्षा भयानक यादें आती है तो आप समझें कि आपका मानसिक शोधन हो रहा है। मानसिक शोधन की इस प्रक्रिया मे व्यक्ति एक प्रकार से अपने सामने आप अपराध स्वीकार (Confession) करता है। इससे मन निर्मल होता है। यह निर्मलता तुरत दिखाई नही देगी लेकिन कुछ अरसे बाद आपको, आपके आसपास वालो को आभास होने लगेगा कि आपमे कुछ परिवतन आया है ।

यदि एक सप्ताह के इस अभ्यास के दौरान इस क्रिया मे आपको रस नही मिला तो आप समझ ले कि आप बहिर्मुखी हैं। बहिर्मुखी व्यक्तित्व के शात और एकाग्र होने के साधन भी उसे

अपने आकार से बाहर मिलते हैं। परहित का कोई कार्यक्षेत्र चुन कर आप उसी मे वैसी एकाग्रता और शाति पा सकते हैं जैसी अतर्मुखी व्यक्ति को अपने भीतर स्थित होकर प्राप्त होती है।

भक्तियोग, कमयोग और ज्ञानयोग के मार्ग अलग-अलग प्रकार के व्यक्तित्वो के लिए हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रकृति के अनुकूल मार्ग चुनकर जब उस पर चलता है तो उसे सफलता मिलती है। जो साधक एक सप्ताह की विधि भलीभाति से निभा चुके है, वे अगले सप्ताह का अभ्यास आरभ करें।

दूसरे सप्ताह की अभ्यास-विधि

निराकार से साकार की ओर

शात स्थान मे प्रात काल आखें बद करके आलती-पालती लगाकर बैठे। लगभग पाच मिनट यथापूर्व सास का अवलोकन करें। तत्पश्चात् सास से मन को हटाकर अपने शरीर पर लाए।

मन की आख से अपने तन का निरीक्षण करने की विधि यह है कि मदी आखो की अवस्था मे ही शरीर के प्रत्येक अग को बारी-बारी ध्यान मे लाए। अपना चेहरा दर्पण मे देखा हुआ है तथा अपना पूरा शरीर नहाते समय देखा हुआ है। अब आख बद करके उस देखे हुए को कल्पना-चक्षुओ से देखना है।

नाक से शरीरावलोकन आरभ करे। आखें बद कर नाक, आखे, मस्तक, सिर, मुह, कान, गदन, कधे, बाजू, कुहनिया, हाथ, हाथो की उगलिया, तत्पश्चात् वापस कधे पर लौटें, दूसरे बाजू के अगो-प्रत्यगो को उसी प्रकार मन से छुआते चले जाए।

मन बीच मे कई बार उडान भरेगा। जैसे ही लौटे, उसे पुन कुछ मिनट के लिए श्वास के निरीक्षण पर लगाए। फिर उसी अग

पर लाए जहा से वह गैरहाजिर हुआ था और वही से अग का निरीक्षण पुन आरभ करें।

पुन उगलियो से कधे, कधे से रीढ की हड्डी, गुदा, जननेंद्रियो, जाघो, घुटनो, पिंडलियो, पाव, पाव की उगलियो को मुदी आखो से देखें। एक टाग का निरीक्षण खत्म होने पर दूसरे पाव की उगलियो से ऊपरी अगो की मानसिक यात्रा करे । जननेंद्रियो, नाभि, पेट, छाती, गदन, ठुड्डी, नासिका तक आकर पुन श्वास-प्रश्वास पर ध्यान लाकर आखें खोल ले और घडी मे देखे कि शरीर की मानसिक परिक्रमा मे कितनी देर लगी है और यह भी ध्यान मे लाए कि इस यात्रा मे मन कितनी बार शरीर से अलग होकर बाहर गया और कहा गया।

यदि इस अवलोकन मे पाच मिनट लगे हैं तो आपमें अपने अतर मे झाकने की सामान्य क्षमता है। यदि इससे अधिक समय लगा है तो आपमें विशेष क्षमता है। यदि इससे कम समय मे यह निरीक्षण पूरा हो गया है तो आपमे सामान्य से कम क्षमता है। अल्प क्षमता होने पर शरीरावलोकन के लिए आप नित्य अधिक समय दें।

पिछली मानसिक यात्रा का लेखा-जोखा करने के उपरात पुन आखें बद करके एक-दो मिनट तक श्वास-प्रश्वास का निरीक्षण करें। तत्पश्चात् शरीर के अगो का पुन मन से निरीक्षण आरभ करें।

अपने आपको अनेक कोणो से देखें

पहली बार शरीर अवलोकन की य
पिछले भाग, पीठ, रीढ की हड्डी के मार्ग न
नाभि, पेट के रास्ते से करें। पिछली व
की कुहनी और उगि वाहरी भाग

तो इस बार उगलियो के भीतरी भाग, हथेली, कलाई तथा बाजू के भीतरी भाग को ध्यान मे लाए।

पिछली बार यदि आप अगो को मात्र छूते हुए तेजी से निकल गए थे तो अब अपने मन की गति को धीमा करके हर अग पर रुकते हुए आगे बढे। पहले यदि आपने सभी उगलियो का एक-साथ चिंतन किया था तो अब प्रत्येक उगली पर ध्यान टिकाते हुए प्रत्येक उगली के प्रत्येक पोर का मन से अवलोकन करते हुए आगे बढे। अन्य भागो का भी इसी प्रकार सविस्तार और सूक्ष्मता से निरीक्षण करें। इस दौरान मन शरीर से बाहर जाए तो उसे सहज भाव से जाने दे। लौटने पर उसका स्वागत करके पुन उसी भाग पर लगाए जहा से अनुपस्थित हुआ था।

अपनी प्रगति का स्वय निरीक्षण करें

इस बार आख खोलकर देखे कि निरीक्षण मे कितना समय लगा है। यदि पहली यात्रा मे अधिक समय मे यह यात्रा पूरी हुई है तो आपकी उन्नति की गति तेज है। यदि उतने समय या उससे कम समय मे यात्रा पूरी हुई है तो सामान्य अवस्था है। आधे घटे की अवधि मे जितनी बार बन पडे, शरीर की यह मानसिक परिक्रमा जारी रखें।

प्रत्येक अभ्यास मे शरीर के कुछ अग छूने से रह जाएगे, अगले अभ्यास मे उन्ही अगो के माग से यात्रा करके उन्हे मन से छूकर आगे बढ़ें।

सायकाल पुन आधे घटे के लिए यही अभ्यास करें।

दूसरे चरण के पहले दिन का यह अभ्यास शरीर का मात्र ऊपरी परिचय कराएगा। रसहीन परिचय। इसके साथ ही आपको अपने मन की उडान क्षमता का एहसास भी रहेगा कि इतने अल्प काल मे मन कहा पहुच जाता है। तनिक कल्पना करें, ऐसे द्रुत-

पर लाए जहा से वह गैर
निरीक्षण पुन आरभ करें

पुन उगलियो से कधे,
जाघो, घुटनो, पिडलियो, प
देखें। एक टाग का निरीक्ष
से ऊपरी अगो की मानसि
छाती, गर्दन, ठुड्डी, नासिक
ध्यान लाकर आखे खोल र
सिक परिक्रमा मे कितनी
कि इस यात्रा मे मन कित
गया और कहा गया।

यदि इस अवलोकन मे,
अतर मे झाकने की सामा
लगा है तो आपमे विशेष
निरीक्षण पूरा हो गया है
अल्प क्षमता होने पर शरी
समय दें।

पिछली मानसिक यात्र
आखें बद करके एक-दो
करें। तत्पश्चात् शरीर के
करें।

अपने आपको अनेक कोणो

पहली बार शरीर अव
पिछले भाग, पीठ, रीढ की
नाभि पट के रास्ते मे करें
की कुहनी और उगलियो

शरीर पर लहराती हुई प्रतीत होगी। थूक का निगलना, जो सामान्यत आपके अनजाने मे होता रहता था, **वह सब कुछ अब आपकी जानकारी मे हो रहा होगा**। किसी अग पर आपका मन अधिक देर तक रुकेगा, कही तेजी से चल देगा। जहा तेजी से चले उसे धीमी गति से चलने के लिए बाध्य करे।

पाच दिन तक यह अभ्यास करने के उपरात छठे दिन इसमे जरा परिवर्तन करे। आपको जिस अग पर ध्यान टिकाना है, खुली आख से उसे देख लें। यदि वह अग उगली है तो उगली के पोर, पोरो पर की लकीरें, उसके नाखून, नखो के निचले भाग के सफेद चद्र, उनका रग, उन सबको गहरी नजर से देखे। पुन आख बद करके उस अग को कल्पना की आखो से देखे। सारे विवरण को उसी प्रकार देखे जिस प्रकार खुली आखो से देखा था।

इसी प्रकार शरीर के प्रत्येक अग को खुली आखो से देखकर मन की आख से देखने का अभ्यास छठे दिन की दो बैठको मे करें।

अब आप देखेंगे कि आपका मन अपेक्षाकृत शरीर से कम अनुपस्थित हो रहा है। यह अभ्यास की सफलता की निशानी है।

सातवे दिन के अभ्यास मे आप आख बद करके शरीर के किसी अग का सचालन करके उस सचालन को मन द्वारा देखे। हाथ की उगली को हिलाए तो मुदी आखो की अवस्था मे आपका मन यह अनुभव करेगा कि वह उगली की हरकत को देख रहा है। पाँव की उगलियो की हरकत भी मुदी आखो से अनुभव होनी चाहिए। सास लेते-छोडते समय पेट का उतार-चढाव, यह सब मानसिक दृष्टि से देखा जाना चाहिए। पहली बैठक मे यदि इस अनुभूति मे कमी रह जाए तो दूसरी बैठक मे इस कमी को पूरा करें। प्रत्येक बैठक का अभ्यास सास की आवाजाही के निरीक्षण से आरभ करें और बैठक के मध्य मे जब आराम करें तो अगला अभ्यास पुन श्वास-निरीक्षण से आरभ करे।

गामी और शक्तिशाली मन मे यदि आप एकाग्र होने की शक्ति का विकास कर पाए तो आप क्या नही कर सकते, दूसरे से क्या नही करा सकते ?

निरीक्षण मे अधिक सूक्ष्मता लाए

दूसरे दिन के अभ्यास मे पहले दिन की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता से शरीर का दर्शन करना है। प्रत्येक अग पर रुककर उसके विवरण का परिचय पाना है। यदि चेहरे का निरीक्षण करना है तो भौहे, पलके, आखो की पुतलिया, पुतलियो के भीतर का काला केंद्रक, इन सबको बारी-बारी से मन की आख से छूना है। नासिका के साथ उसके छिद्र का भी, आपकी कल्पना मे पूरे अग का चित्र बनना चाहिए।

जितना समय पहले पूरे शरीर की यात्रा पर लगा था, उतना ही समय केवल एक चेहरे पर लगना चाहिए। इसी प्रकार पूरे शरीर को सिर, टाग, पीठ, पेट, छाती, कमर, कूल्हे रूपी खडो मे बाटकर प्रत्येक खड का सविस्तार मानसिक निरीक्षण करें। बीच मे जितनी बार अनुपस्थिति हो, उसकी वापसी श्वास की आवाजाही पर ध्यान करके फिर उसी अग पर लाए जहा से छोडा था।

दो तीन दिन के अभ्यास से आपको महसूस होने लगेगा कि आपके प्रत्येक अग मे कुछ घटित हो रहा है। आपमे ध्वनि-विस्तारक यत्र की सी क्षमता उत्पन्न हो गई है जिससे आप अपना एक एक स्पदन सुन सकते है, अपने शरीर के अतर मे होने वाली प्रत्येक क्रिया आपको अनुभव हो रही है।

इस ध्यान के दौरान आपको लगेगा कि तन पर कही कुछ रेग रहा है, खुजलाने को जी करेगा। जितनी देर तक बिना खुजलाए रह सके, रहे। जब असहनीय हो जाए तो खुजला लें। शरीर के किसी अग पर पडी पसीने की बूद विशाल जलाशय की तरह

शरीर पर लहराती हुई प्रतीत होगी। थूक का निगलना, जो सामान्यत आपके अनजाने मे होता रहता था, **वह सब कुछ अब आपकी जानकारी मे हो रहा होगा।** किसी अग पर आपका मन अधिक देर तक रुकेगा, कही तेजी से चल देगा। जहा तेजी से चले उसे धीमी गति से चलने के लिए बाध्य करे।

पाच दिन तक यह अभ्यास करने के उपरात छठे दिन इसमे जरा परिवर्तन करे। आपको जिस अग पर ध्यान टिकाना है, खुली आख से उसे देख ले। यदि वह अग उगली है तो उगली के पोर, पोरो पर की लकीरें, उसके नाखून, नखो के निचले भाग के सफेद चद्र, उनका रग, उन सबको गहरी नजर से देखे। पुन आख बद करके उस अग को कल्पना की आखो से देखे। सारे विवरण को उसी प्रकार देखे जिस प्रकार खुली आखो से देखा था।

इसी प्रकार शरीर के प्रत्येक अग को खुली आखो से देखकर मन की आख से देखने का अभ्यास छठे दिन की दो बैठको मे करे।

अब आप देखेगे कि आपका मन अपेक्षाकृत शरीर से कम अनुपस्थित हो रहा है। यह अभ्यास की सफलता की निशानी है।

सातवे दिन के अभ्यास मे आप आख बद करके शरीर के किसी अग का सचालन करके उस सचालन को मन द्वारा देखे। हाथ की उगली को हिलाए तो मुदी आखो की अवस्था मे आपका मन यह अनुभव करेगा कि वह उगली की हरकत को देख रहा है। पाव की उगलियो की हरकत भी मुदी आखो से अनुभव होनी चाहिए। सास लेते छोडते समय पेट का उतार-चढाव, यह सब मानसिक दृष्टि से देखा जाना चाहिए। पहली बैठक मे यदि इस अनुभूति मे कमी रह जाए तो दूसरी बैठक मे इस कमी को पूरा करें। प्रत्येक बैठक का अभ्यास सास की आवाजाही के निरीक्षण से आरभ करे और बैठक के मध्य मे जब आराम करे तो अगला अभ्यास पुन श्वास-निरीक्षण से आरभ करे।

गामी और शक्तिशाली मन मे यदि आप एकाग्र होने
का विकास कर पाए तो आप क्या नही कर सकते, द्
नही करा सकते ?

निरीक्षण मे अधिक सूक्ष्मता लाए

दूसरे दिन के अभ्यास मे पहले दिन की अपेक्षा अ
से शरीर का दर्शन करना है। प्रत्येक अग पर रु
विवरण का परिचय पाना है। यदि चेहरे का निरीक्षण
भौहे, पलके, आखो की पुतलिया, पुतलियो के भीत
केंद्रक, इन सबको बारी-बारी से मन की आख से छून
के साथ उसके छिद्र का भी, आपकी कल्पना मे पूरे
बनना चाहिए।

जितना समय पहले पूरे शरीर की यात्रा पर ल
ही समय केवल एक चेहरे पर लगना चाहिए।
शरीर को सिर, टाग, पीठ, पेट, छाती, कमर, कृ
बाटकर प्रत्येक खड का सविस्तार मानसिक निर
मे जितनी वार अनुपस्थिति हो, उसकी वापसी इ
पर ध्यान करके फिर उसी अग पर लाए जहा

दो तीन दिन के अभ्यास से आपको मह
आपके प्रत्येक अग मे कुछ घटित हो रह
विस्तारक यत्र की सी क्षमता उत्पन्न हो गई
एक-एक स्पदन सुन सकते हैं, अपने शरीर
प्रत्येक क्रिया आपको अनुभव हो रही है।

इस ध्यान के दौरान आपको लगेगा
रहा है, खुजलाने को जी करेगा। जितन
रह सकें, रहे। जब असहनीय हो जाए
किसी अग पर पडी पसीने की बूद

तीसरे सप्ताह की अभ्यास-विधि

सुलेख सीखने के इच्छुक शिशु को वर्णमाला के अक्षरो का ज्ञान कराने के लिए उसका शिक्षक तख्ती पर पेंसिल से कुछ अक्षर लिखकर दे देता है और शिशु उन पर कलम से रोशनाई फेरकर उन रूपो को धीरे-धीरे हृदयगम करता है और इस योग्य बनता है कि एक दिन विना पूरने के (पेंसिल से बने अक्षरो के) सुलेख लिख लेता है।

आपका अब तक का अभ्यास पूरने पर स्याही फेरने के समान रहा है। अब आपको तख्ती या चार लकीरो वाली कापी छोडकर सादे कागज पर लिखने जैसा अभ्यास, ध्यान के क्षेत्र मे करना है। **मस्तिष्क के उस केंद्र तक पहुचना है जिसे सहस्रार, तीसरा नेत्र या (छठी ज्ञानेंद्रिय) कहा जाता है।**

पिछले दो सप्ताह की साधना भली भाँति निभा लेने के उपरात आपका मन पर पहले की अपेक्षा अधिक अधिकार हो चुका है।

र तक की यात्रा

तीसरे चरण की इस प्रथम बैठक मे दो-तीन मिनट श्वास-

अपनी जाच फिर से

उपर्युक्त अभ्यास मे यदि आपका मन न लगे तो स्पष्ट है कि आपका मन शरीर मे पूरी तरह डूब नही पाया। इसलिए आप शरीर मे डूबने के रस से अपरिचित रहे। इससे प्रकट होता है कि आपमे ध्यानयोगी की अपेक्षा कर्मयोगी या भक्तिमार्गी होने की सभावना अधिक है। अपने मन को शात एव सयत करने के लिए आपको मात्र समाजोपयोगी क्रियाशीलता की जरूरत है।

जिन्हे अपने शरीरावलोकन मे रस मिलने लगा है, वे इस मानसिक यात्रा के अगले पडाव की ओर बढें।

तीसरे सप्ताह की अभ्यास-विधि

सुलेख सीखने के इच्छुक शिशु को वर्णमाला के अक्षरो का ज्ञान कराने के लिए उसका शिक्षक तख्ती पर पेंसिल से कुछ अक्षर लिखकर दे देता है और शिशु उन पर कलम से रोशनाई फेरकर उन रूपो को धीरे-धीरे हृदयगम करता है और इस योग्य बनता है कि एक दिन बिना पूरने के (पेंसिल से बने अक्षरो के) सुलेख लिख लेता है।

आपका अब तक का अभ्यास पूरने पर स्याही फेरने के समान रहा है। अब आपको तख्ती या चार लकीरो वाली कापी छोडकर सादे कागज पर लिखने जैसा *अभ्यास, ध्यान के क्षेत्र* मे करना है। **मस्तिष्क के उस केंद्र तक पहुचना है जिसे सहस्रार, तीसरा नेत्र या (छठी ज्ञानेंद्रिय) कहा जाता है।**

पिछले दो सप्ताह की साधना भली भाँति निभा लेने के उपरात आपका मन पर पहले की अपेक्षा अधिक अधिकार हो चुका है।

सहस्रार तक की यात्रा

तीसरे चरण की इस प्रथम बैठक मे दो-तीन मिनट श्वास-

अपनी जाच फिर से

उपर्युक्त अभ्यास मे यदि आपका मन न लगे तो स्पष्ट है कि आपका मन शरीर मे पूरी तरह डूब नही पाया। इसलिए आप शरीर मे डूबने के रस से अपरिचित रहे। इससे प्रकट होता है कि आपमे ध्यानयोगी की अपेक्षा कर्मयोगी या भक्तिमार्गी होने की सभावना अधिक है। अपने मन को शात एव सयत करने के लिए आपको मात्र समाजोपयोगी क्रियाशीलता की जरूरत है।

जिन्हे अपने शरीरावलोकन मे रस मिलने लगा है, वे इस मानसिक यात्रा के अगले पडाव की ओर बढें।

तीसरे सप्ताह की अभ्यास-विधि

सुलेख सीखने के इच्छुक शिशु को वणमाला के अक्षरो का ज्ञान कराने के लिए उसका शिक्षक तख्ती पर पेंसिल से कुछ अक्षर लिखकर दे देता है और शिशु उन पर कलम से रोशनाई फेरकर उन रूपो को धीरे-धीरे हृदयगम करता है और इस योग्य बनता है कि एक दिन बिना पूरने के (पेंसिल से बने अक्षरो के) सुलेख लिख लेता है।

आपका अब तक का अभ्यास पूरने पर स्याही फेरने के समान रहा है। अब आपको तख्ती या चार लकीरो वाली कापी छोडकर सादे कागज पर लिखने जैसा अभ्यास, ध्यान के क्षेत्र मे करना है। **मस्तिष्क के उस केंद्र तक पहुचना है जिसे सहस्रार, तीसरा नेत्र या (छठी ज्ञानेंद्रिय) कहा जाता है।**

पिछले दो सप्ताह की साधना भली भाति निभा लेने के उपरात आपका मन पर पहले की अपेक्षा अधिक अधिकार हो चुका है।

सहस्रार तक की यात्रा

तीसरे चरण की इस प्रथम बैठक मे दो-तीन मिनट श्वास-

निरीक्षण करे। फिर शरीर के निचले भाग, पाव के नखो से ऊपरी अगो की ओर मन की यात्रा आरभ करें।

इस यात्रा मे पूरे शरीर का मानसिक अवलोकन करते हुए ध्यान को सिर के केंद्र मे उस भाग पर ले जाए जो तालु से ऊपर तथा माथे व कनपटियो के मध्य है। बडी उम्र के व्यक्तियो मे यह स्थान खोपडी के सख्त आवरण के कारण बाहर से प्रतीत नही होता किंतु दो-तीन मास के शिशु के सिर के मध्य कोमल बना रहता है।

इस स्थान पर ध्यान को लगभग पाच मिनट तक टिका रहना चाहिए। पिछले अभ्यास के आधार के कारण आपमे अपने मन को कही भी टिकाने की क्षमता उत्पन्न हो चुकी है। इसलिए विश्वास है कि जब तक आप चाहेगे, आपका मन उस भाग मे स्थिर रहेगा। क्षण-प्रतिक्षण आपको लगेगा कि मस्तक के इस भाग पर कुछ इकट्ठा हो रहा है। जो कुछ इकट्ठा हो रहा है वह मुक्त होकर बहना चाहता है। किंतु इच्छा-शक्ति की दीवार उसे बहने, निकलने नही दे रही। लगभग पाच मिनट के पश्चात् आप मन का नियत्रण उस स्थान पर से हटा लें। जो कुछ बहना, बिखरना चाहता है, उसे मुक्त होकर बिखर जाने दें।

आपकी इस मानसिक क्रिया से आपको लगेगा कि एक विशाल जलाशय का बाध खुल गया है और उसकी धाराए आपकी जटा से निकलकर आपके शरीर के अग-प्रत्यग पर फैल रही हैं। इन अनेक धाराओ मे से कोई नासिका, ठुड्डी, गर्दन के भाग से होकर नीचे की ओर उन्मुख है, कोई कनपटियो से होकर गर्दन, पीठ को भिगो रही है और कोई उन सबसे तेज बहती हुई शरीर के अन्य भाग को सराबोर कर रही है। मन को अब उन धाराओ का पीछा करना है। लेकिन इतनी धाराओ का पीछा अकेला मन कैसे करे? यहा मन के विकेंद्रित होने का भय है। उसे विकेंद्रित न होने दे।

बल्कि उसे किसी एक धारा का पीछा करने दे। वह धारा या बूद कही ठहरे तो मन का धक्का देकर उसे आगे बढाए। यदि अन्य धारा मन को अपनी ओर आकृष्ट करे तो उसे अनदेखा करके पूव निश्चित धारा को अधोभाग तक पहुचाकर अन्य धारा की ओर उन्मुख हों। एक धारा को मार्ग मे ही छोडकर दूसरी का पीछा न करें।

मन का यह खेल आपको इतना सुहाएगा कि आपको समय के कटने का आभास तक न होगा और आनद की किरणें फूटेगी। हर बार लगेगा कि आपका शरीर पहले से अधिक निर्मल होकर नूतन रूप धारण कर रहा है। इस खेल मे लगभग पद्रह मिनट व्यतीत करके आखे खोल ल। आपको सृष्टि का रग निखरा-निखरा एव नया-नया-सा लगेगा।

यह अभ्यास एक दिन मे दो बार अवश्य किया करे।

एक स्पष्टीकरण

यहा यह प्रश्न सहज ही उठ सकता है कि इस सारे अभ्यास का प्रयोजन क्या है। अदृश्य बूदो के स्नान से क्या मिलेगा, जिसके लिए अपना अमूल्य समय नष्ट किया जाए।

इस प्रकार का प्रश्न उस शिशु के मन मे भी उठता है जो देखता है कि वयस्क जन विशाल पार्क के घेरे मे सैर करते हुए कई चक्कर लगाते है। जिज्ञासु शिशु यह जानना चाहता है कि यह पथिक यही क्यो चक्कर काट रहा है। उसे जाना कहा हे। शिशु को क्या मालूम कि ऐसे पथिक का कोई गतव्य नही होता है बल्कि शरीर की क्षमता वढाना होता है।

जिस प्रकार तन की पुष्टि के लिए खेल-कूद आदि व्यायाम होते हैं, उसी प्रकार मन को एकाग्र करने के भी अनेक व्यायाम होते है। उसमे से एक की चर्चा हमने यहा की है। इस विधि का

लाभ तुरत शायद आपको न दिखे लेकिन कुछ समय बाद आप देखेगे कि अब आपका अतरतम पहले की अपेक्षा अधिक जाग्रत है और इस कारण आपके दृष्टिकोण मे व्यापकता आ गई है। उस व्यापकता के कारण आप अपने प्रयासो के अवाछित फल से भी घबराते नही बल्कि विपम स्थिति को भी सहज भाव से स्वीकार या अस्वीकार करते है। आपमे सही निर्णय करने की क्षमता का विकास हुआ है। आपकी स्मरण शक्ति बढी है। इन सबका कही-न-कही सासारिक लाभ है।

इसके पारलौकिक लाभ श्रद्धा और विश्वास पर आधारित है। जो परलोक पर विश्वास नही करते वे इतना जान सकते हैं कि एकाग्रता मन का व्यायाम है, इसका पुरस्कार मानसिक शाति है। शात अवस्था व्यक्ति को तनावो से मुक्त रखती है, जिसका लाभ इसी लोक मे अनुभव हो सकता है।

खेल-खेल मे ध्यान

स्वरयोग

स्वरयोग तत्रयोग का प्रवेश-द्वार है। शकुन तथा प्रश्न ज्योतिष मे भी स्वरो का महत्त्व माना गया है, किंतु हम यहा स्वरयोग सबधी केवल उन्हीं अशो को ले रहे हैं जो तन के स्वास्थ्य और मन की शाति के लिए लाभदायक हैं।

विषय-प्रवेश

'स्वर' के अनेक अर्थ हैं। योग के क्षेत्र मे स्वर का अर्थ 'श्वास-निश्वास' अर्थात् सास की आवाजाही है।

प्राणायाम सास को नियत्रित करने की विधि है। स्वर-योग सास का निरीक्षण करने तथा सास को अनुकूल बनाने की विधि है।

इससे पहले 'विपश्यना' सबधी प्रकरण मे सास के निरीक्षण द्वारा अपने-आपमे स्थित होने का उपाय बताया गया है। स्वर योग मे सास का निरीक्षण करते समय यह देखना होता है कि सास नासिका के दाये छिद्र से आ रही है या बाये छिद्र से। यह सरल-सी क्रिया करते ही तन और मन पर शुभ प्रभाव पडने लगता है।

स्वर जानने का ढग

सास नासिका के दोनो छिद्रो से आती-जाती है। स्वर-योग मे यह देखना होता है कि किस छिद्र से सास का प्रवाह अधिक वेगवान है। यह जानने का ढग अत्यत सरल है।

मुख को बद करके नासिका के दाये छिद्र को उगली से बद करें। बाया छिद्र खुला रखे। गहरी सास लें और छोडें। फिर बायें छिद्र को उगली से बद करें। दाया छिद्र खुला रखे। गहरी सास लें और छोडें।

इन दोनो क्रियाओ को दो-तीन बार करने से आप जान लेंगे कि किस छिद्र से सास का प्रवाह अधिक सुगमता से हो रहा है।

इस विधि को तुरत ही आजमाए। इस पुस्तक को बद करके इस विधि द्वारा देखे कि आपका कौनसा स्वर इस समय वेगवान है।

आरभ मे दोनो छिद्रों को बारी-बारी से बद करके स्वर के वेग का पता चलता है। अभ्यस्त होने के बाद बिना किसी छिद्र को बद किए नासिका से केवल सास छोडने और लेने से ज्ञात हो जाता है कि किस छिद्र का स्वर अधिक तेज है।

स्वरो के नाम तथा उनसे सबधित नाडिया

नासिका के बायें छिद्र से प्रवाहित होने वाले स्वर को चद्र स्वर अथवा ठडी सास कहा जाता है। जिस समय चद्र स्वर वेगवान हो, उस समय 'इडा' नाडी अधिक प्रभावी होती है।

दाये छिद्र की सास को सूय स्वर या गम सास कहते हैं। जिस समय दाया स्वर तेज हो उस समय मानव पर 'पिंगला' नाडी का अधिक प्रभाव होता है।

सूय स्वर तथा चद्र स्वर मे से प्रत्येक का प्रभावी काल समायत एक घटे से दो घटे के मध्य रहता है। व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति तथा वातावरण के अनुसार प्रत्येक स्वर का प्रभावी समय कम या अधिक भी होता रहता है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि दोनो स्वर एकसाथ समान वेग से चलते है। या एक एक दो दो मिनट के अतर से चद्र या सूय स्वर बदलने लगते हैं। उस अवस्था से ज्ञात होता है कि मानव उस समय सुषुम्ना नाडी के प्रभाव मे है।

पश्चिमी शरीर-रचना विज्ञान के अनुसार 'सुषुम्ना'

आधुनिक शरीर-रचना-विज्ञान मे कही गई मेडुला ओबलागाटा (Medulla oblongata) का हिंदी अनुवाद 'सुषुम्ना शीष' है। यह

सुषम्ना शीष बोध-वाहक स्नायुओ (Sensory Nerves) तथा कार्य-वाहक स्नायुओं (Motor Nerves) पर आधारित है।

सुषुम्ना शीष का विस्तार सुषुम्ना रज्जु (Spinal cord) है। सुषुम्ना रज्जु के माध्यम से मस्तिष्क से सारे शरीर का सबध जुडा रहता है।

योग मे वर्णित इडा, पिंगला तथा सुषुम्ना का आधुनिक शरीर-रचना विज्ञान मे कही कोई नाम नही है किंतु यह कहा गया है कि मुख्य मस्तिष्क (Cerebrun) का बाया गोलार्द्ध (Left Hemi sphere) शरीर के दाये भाग को प्रभावित करता है और दाया गोलार्द्ध (Right Hemisphere) शरीर के दायें भाग को प्रभावित करता है। इन दोनो गोलार्द्धों का दायी सास या बायी सास से कोई सबध नही है।

कुछ योगीजन सवेदनकारी स्नायु सस्थान (Sympatheitc Nervous System) को सूर्य स्वर का तथा सौम्यकारी स्नायु सस्थान (Parasymphathetic N S) को चद्र स्वर का प्रेरक मानते हैं किंतु स्नायु सबधी अधिक विवरणो से ज्ञात होता है कि सवेदनकारी स्नायु सस्थान पाचन सस्थान पर बुरा प्रभाव डालता है। किंतु स्वर योग के अनुमार सूय स्वर के समय भोजन ठीक पचता है।

इस प्रकार के विवरण से यह परिणाम निकलता है कि योग मे वर्णित 'नाडी' तथा आधुनिक शरीर-रचना-विज्ञान मे वर्णित 'स्नायु' मे अतर है।

वास्तव मे नाडिया शरीर मे व्याप्त प्राण के अलग-अलग प्रवाह हैं। इन प्रवाहो की सख्या बहत्तर हजार है। इनमे से मुख्य प्रवाह तीन है—

1 इडा,
2 पिंगला,
3 सुषुम्ना।

शरीर सबधी आधुनिक तथा प्राचीन ग्रथो के अध्ययन से प्रतीत होता है कि स्नायु स्थूल शरीर से सबधित हैं और नाडिया सूक्ष्म शरीर से सबधित है।

सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर का भेद

सूक्ष्म तथा स्थूल शरीर का भेद स्पष्ट करना बहुत कठिन है। आधुनिक शरीर-विज्ञान तथा प्राचीन भारतीय दर्शनो के अध्ययन मनन से जैसा मैं समझ पाया हू, वह इस प्रकार है

आधुनिक विज्ञान व्यक्ति के चरित्र, शरीर-लक्षण तथा उसकी मूल प्रवृत्ति का कारण क्रोमोसोम्ज (*Chromosomes*) तथा जीस (Genes) को मानता है। ये क्रोमोसोम्ज तथा जीस व्यक्ति को उसके माता पिता से मिलते है। उनमे माता-पिता के पूर्वजो की विशेषताए भी समाई रहती है।

भारतीय दर्शनो मे व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति का निर्णय करने वाले तत्त्वों मे पूर्वजन्म के सस्कार मुख्य माने गए है।

सस्कार मन पर पडी वह छाप है, जो पूर्वजन्म के कृत्यों, इच्छाओ और आशाओ के सयोग से बनती है। दूसरे शब्दो मे हम यो कह सकते हैं कि मस्तिष्क के क्षेत्र मे जो कार्य 'स्मृति केंद्र' का है, मन के क्षेत्र मे वही कार्य सस्कार का है।

सस्कारो के पुज को अलग-अलग दशनो मे अलग-अलग नाम दिए गए हैं। उनमे 'पुद्गल' तथा 'कारण शरीर' के नाम अधिक प्रचलित हैं।

'पुद्गल' उन द्रव्य परमाणुओ को कहा जाता है, जिनके सयोग से शरीर, मन, प्राण आदि का निर्माण होता है।

'कारण शरीर' को 'कार्य शरीर' का मूल माना जाता है। कारण शरीर को सामान्य भाषा मे 'सूक्ष्म शरीर' तथा कार्य शरीर को 'स्थूल शरीर' कहा जाता है।

स्वर सबधी प्रचीन मान्यताए

स्वर सबधी प्राचीन पुस्तको मे 'शिव स्वरोदय' सबसे अधिक प्रचलित है। स्वामी चरणदास कृत 'ज्ञान स्वरोदय' मे 'शिव स्वरोदय' के कुछ अशो को हिंदी पद्यो मे कहा गया है। इन पुस्तको के आधार पर स्वर सबधी बहुत सी पुस्तको की रचना हुई है।

स्वर सबधी पुस्तको मे श्वास विशेष के चलने की अवधि और समय के अनुसार स्वास्थ्य तथा आयु सबधी भविष्यवाणिया की गई है। दोनो प्रकार के सास के वेग तथा उस वेग के समय के तिथि वार और ग्रह-नक्षत्र के अनुसार व्यक्ति के लिए शुभ-अशुभ फल बताने की व्यवस्था भी बहुत सी पुस्तको मे है।

उदाहरणत गृह-प्रवेश, नगर-प्रवेश आदि शुभ कार्यो को चद्र स्वर के प्रभाव काल मे करने का निर्देश है। **चद्र स्वर का निरतर चलना दीर्घायु का कारण माना जाता है।**

भोजन, लडाई तथा कामक्रीडा जैसे कर्मठतापूर्ण कार्यो मे प्रवृत्त होते समय, राजा, अफसर आदि के सम्मुख जाते समय, सूर्य स्वर का चलना फलदायक माना गया है। **कई दिनो तक बिना बदले लगातार सूर्य स्वर का चलना मृत्यु को निकट लाता है।**

सुषुम्ना स्वर को विष के समान माना गया है। लगातार दो घटे तक चलने वाला सुषुम्ना स्वर प्राणघातक है। सुषुम्ना के प्रभाव काल मे अन्य क्रियाए स्थगित करके भजन, उपासना मे समय बिताने का निर्देश है। कुछ सिद्धजनो की मान्यता है कि सुषुम्ना स्वर के प्रभाव काल मे मन बिना प्रयास के एकाग्र हो जाता है।

नवीन अनुसधान आवश्यक है

इन मान्यताओ के पीछे कितना मनोवैज्ञानिक सत्य है और कितना शारीरिक सत्य है, इस विषय मे कोई भी निणय देना उचित

नहीं हैं लेकिन हम यह जरूर चाहते हैं कि पुराने ज्ञान की परख
नवीन युग और नवीन परिस्थितियों में अवश्य होती रहनी चाहिए।
कठिनता यह है कि हमारा समाज दो वर्गों में बंटा हुआ है।
एक वर्ग पुराने ज्ञान को 'ढकोसला' कहकर उसे एकदम रद्द करता
है। दूसरा वर्ग पुराने ज्ञान को ज्यों-का त्यों स्वीकार कर लेता है।
किसी नये अनुसंधान की आवश्यकता ही नहीं समझता है।

हमारे विचार में स्वर द्वारा भविष्य-कथन का आधार यह है कि स्थूल शरीर में घटित होने वाली प्रत्येक घटना पहले सूक्ष्म शरीर में घटित होती है। यदि सूक्ष्म शरीर के संकेत समझ में आ जाए तो स्थूल शरीर से प्रकट होने वाली घटना को पहले से जाना जा सकता है और प्रयत्न करके उस घटना को रोका भी जा सकता है।

स्वर संबंधी हमारे निष्कर्ष

स्वर संबंधी कुछ मेरे अनुभव हैं और मेरे साधक मित्रों के अनुभव भी हैं। उन सबके आधार पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं, वे इस प्रकार हैं—

चंद्र स्वर अथवा बायां स्वर शरीर में शीतलता की प्रधानता प्रकट करता है। सूर्य स्वर अर्थात् दायां स्वर शरीर में अतिरिक्त ताप की स्थिति बताता है।

मानव में शीतलता की प्रधानता हो तो चित्त ... में ... ठीक से होते हैं। ऐसे समय में किए जाने वाले ... विचार ... आधारित होते हैं। साथ ही यह भी तथ्य है ... तथा नींद का कारण भी बनती है।

आयुर्वेद में वर्णित 'कफ' अथवा '...' ... क्षेत्र 'चंद्र स्वर' से मिलता-जुलता है।

सूर्य स्वर अतिरिक्त ... करता।

शारीरिक क्रियाशीलता बढाता है। आयुर्वेद मे वर्णित पित्त अथवा अग्नि तत्त्व जैसा प्रभाव सूर्य स्वर के समान है। सूर्य स्वर के प्रभावकाल मे अन्न आसानी से पचता है। नहाते समय सर्दी कम लगती है।

सूर्य स्वर के प्रभावी काल मे हर प्रकार की प्रतिरोध (Resistance) की क्षमता बढ जाती है। भावावेग तथा तनाव के अवसर पर सूर्य स्वर अधिक प्रभावी होता है।

प्राचीन स्वर-ग्रथो मे कहा गया है कि दिन के समय चद्र स्वर का अधिक चलना तथा रात के समय सूर्य स्वर का अधिक चलना उत्तम है। इसका कारण शायद यह है कि दिन को गर्मी होती है, उस समय चद्र स्वर गर्मी की विषमता को कम करता है। रात ठडी होती है, उस समय सूर्य स्वर का चलना शीत का सामना करने की शक्ति देता है।

यह उन दिनो की मान्यताए हैं जब सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय व्यक्ति का जागरण काल होता था। सूर्योदय तथा सूर्यास्त के मध्य काल मे भोजन कर लिया जाता था।

आज के वैज्ञानिक उपकरणो ने व्यक्ति को सूर्य चद्र पर निर्भर नहीं रहने दिया है। आज ग्रीष्म ऋतु की प्रखर दोपहर मे शीत का वातावरण बन सकता है। शीतऋतु की ठडी रातो मे पसीना लाया जा सकता है। ऐसे वैज्ञानिक साधनो को देखते हुए हम समझते हैं कि समय दिन का हो या रात का, यदि वातावरण गर्म है तो चद्र स्वर शाति अथवा नीद का कारण बन सकता है। यदि वातावरण ठडा है तो चद्र स्वर नीद मे बाधक हो सकता है। ऐसे अवसर पर यदि सूर्य स्वर चलाया जा सके तो वातावरण की शीतलता कम करके नीद लाई जा सकती है।

यदि दिन अथवा रात के समय गर्मी अधिक पड रही हो तो चद्र स्वर का वेग बढाने से बेचैनी कम की जा सकती है।

इस विवरण से आशय यह नही कि जिन प्रदेशो मे बारहो मास वफ जमी रहती है, वहा निरतर सूर्य स्वर जारी रहना चाहिए। ऐसे स्थानो मे भी अधिक शीत और कम शीत के समय अलग-अलग होते हैं। अत एक क्षेत्र के ऋतु की तुलना अन्य क्षेत्र के ऋतु से नही करनी चाहिए बल्कि उसी क्षेत्र के अनुसार बने मानदड के अनुसार करनी चाहिए।

स्वत सचालित अनुकूलन व्यवस्था

जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के अगूठे की छाप अलग होती है, उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति का स्वर-चक्र भी अलग होता है। अपने स्वर-चक्र को समझने की विधि हम इस प्रकरण के अन्त मे दे रहे हैं। फिर भी सामान्य नियम यह है कि एक या दो घटे के अतर से व्यक्ति का स्वर स्वत ही बदल जाता है। बाहरी या भीतरी ताप के अनुसार स्वर के बदलने की व्यवस्था प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति मे होती है। उस व्यवस्था को हमने शरीर की अनुकूलन व्यवस्था नाम दिया है।

इस अनुकूलन व्यवस्था के विषय मे हमने अपनी पुस्तक 'काम भाव की नयी व्याख्या' मे पर्याप्त प्रकाश डाला है। उसी पुस्तक के कुछ अश प्रसग के अनुसार यहा उद्धृत कर रहे है—

> "वातावरण मे फैले ताप को सहन करने की सामथ्य हर व्यक्ति की अलग होती है। जितनी जिसकी सामथ्य होती है, उसमे अधिक गम वातावरण होने पर व्यक्ति की अनुकूलन व्यवस्था स्वेद ग्रथियो को क्रियाशील कर देती है। इससे पसीना खुलकर आता है और पसीने का वाष्पीकरण व्यक्ति को ठडक देता है।
>
> गर्मी की अधिकता व्यक्ति को शरीर पसारने के लिए विवश करती है। इसमे शरीर का अधिकतम भाग

हवा के सपर्क मे आता है और वाष्पीकरण अधिक होता है ।

शीत सहने की सामर्थ्य भी हर व्यक्ति की अलग होती है । वातावरण अनुकूल से अधिक ठडा हो तो व्यक्ति गर्म कपडे ओढता है । इससे वाहर की सर्दी शरीर से दूर रहती है, भीतर की गर्मी बाहर निकल नही पाती ।

पर्याप्त कपडे न होने पर व्यक्ति अपने बाजुओ और टागो को लपेटकर उकड हो जाता है । इससे शरीर का फैलाव कम हो जाता है और ताप का निकास घट जाता है । इस पर भी यदि शीत का मुकावला न हो सके तो शरीर की पेशिया सकुचित होकर ज्यादा ताप पैदा करती हैं । शीतऋतु मे दात कटकटाते है और शरीर ठिठुरता है । इसका कारण पेशियो का अनैच्छिक सकोचन होता है । प्रतिकूल को अनुकूल मे बदलने का यह सारा व्यापार मस्तिष्क के एक अग हाईपोथेलेमस (Hypothalamus) के निर्देश से होता है ।"

अनुकूलन के विषय मे हमारा उपर्युक्त कथन स्थूल शरीर मे होने वाले परिवर्तनो के विषय मे है । इडा, पिंगला और सुषुम्ना का सवध सूक्ष्म शरीर से हे ।

ध्यानयोग सवधी अन्य विषयो का सवध अनुभूति से है । उसे वाहरी परीक्षणो से सिद्ध नही किया जा सकता है, किंतु इडा, पिंगला और सुषुम्ना का प्रभाव काल कही भी सिद्ध किया जा सकता है । कोई भी व्यक्ति कही पर बैठे हुए यह जान सकता है कि उसका सूय स्वर बलवान है या चद्र स्वर या दोनो स्वर समान रूप से बलवान है । इन सबसे बडी बात है कि इन स्वरो को इच्छानुसार बदला भी जा सकता है ।

स्वर को इच्छानुसार बदलने के उपाय

स्वर बदलने के बहुत से उपाय हैं जिन्हे आप तुरत व्यवहार मे ला सकते हैं।

स्वर बदलने के उपायो मे से सबसे प्रभावकारी उपाय है करवट बदलना।

दायें स्वर के वेग को बाये स्वर की ओर बदलना चाहे तो दायी करवट लेट जाए। दायी करवट से आशय है सिरहाने की ओर दाहिना नासिका छिद्र और छत की ओर बाया नासिका छिद्र हो।

दायें स्वर का वेग बढाने के लिए बायी करवट लेटें। दस में से आठ अवसरो पर ये उपाय वाछित फल देते हैं।

करवट बदलने की क्रिया घर पर फुरसत के समय की जा सकती है। दुकान, कार्यालय या सावजनिक स्थल पर स्वर बदलने की आवश्यकता हो तो इसका उपाय भी बताते है

कुर्सी पर बैठी अवस्था मे या सुखासन की अवस्था मे (आलती-पालती की अवस्था) दायें स्वर को वेगवान करना चाहे तो गर्दन बायें कधे की ओर झुकाते हुए हथेली पर टिका दें। शरीर का ऊपरी भाग जितना अधिक बायी ओर झुका सक, अच्छा है।

बायें स्वर का वेग बढाने के लिए गर्दन को दायें कधे की ओर झुकाए। शरीर का ऊपरी भाग जितना दायी ओर झुका सकें, झुकाए।

बैठी अवस्था मे की गई ये क्रियाए साठ प्रतिशत वाछित फल देती हैं।

स्वर बदलने की तीसरी विधि यह है कि नासिका के जिस छिद्र का वेग बढाना हो उसे खुला रखें। दूसरे छिद्र को उगली से या रुई से बद करें। दस-बारह गहरे सास लें और छोडें।

इस विधि की सफलता की सभावना चालीस प्रतिशत है।

ये उपाय निश्चित रूप से फल क्यो नहीं देते ?

उपर्युक्त उपायो के शत-प्रतिशत सफल न होने के अनेक कारण है।

यदि व्यक्ति के निजी स्वर-चक्र के अनुसार स्वर बदलने का समय एक घटे के लगभग है और स्वर को बदले हुए आधा घटा गुजरा है तो पाच-सात मिनट के प्रयत्न से पूर्व स्वर लौटाया जा सकता है।

यदि निजी स्वर-चक्र के अनुसार स्वर अभी-अभी बदला है तो पूव स्वर के लौटने मे बीस-पच्चीस मिनट लग सकते है।

अनेक बार ऐसा भी होता है कि प्रयत्न करने पर भी स्वर नही बदलता। इसका कारण यह होता है कि हमारी आतरिक अवस्था के लिए हमारा चाहा हुआ प्रयत्न प्रतिकूल होता है। ऐसी दशा मे हठपूर्वक स्वर बदलने का यत्न छोड देना चाहिए बल्कि अपनी आतरिक अवस्था के निणय को सहर्ष मान लेना चाहिए। साथ ही अपनी दिनचर्या को सूक्ष्म शरीर के अनुकूल ढालना चाहिए। उदाहरणत भोजन के समय सूय स्वर का चलना पाचन के लिए लाभकर होता है। किंतु हर बार सूय स्वर के अनुसार कार्यालय के लच का समय नही होता। उतने अल्प समय मे न तो सूय स्वर का बदलना सभव होता है, न ही भोजन को स्थगित रखा जा सकता है।

ऐसी स्थिति मे भोजन के बाद वज्रासन की मुद्रा मे बैठने से सूय स्वर की कमी पूरी हो जाती है, अथवा सुखासन मे बैठकर भोजन करने से भी पाचनक्रिया तनिक प्रबल होती है।

कई बार ऐसा होता है कि भोजन ऐसे स्थान पर करना होता है कि जहा वज्रासन या सुखासन मे बैठने की सुविधा नही होती। ऐसी स्थिति मे व्यक्ति को चाहिए कि अपने निश्चित आहार से कम भोजन ले। इससे सूय स्वर का कार्य सध जाता है। इस प्रकार

के एवजी प्रयत्नो से अनियन्त्रित स्वर धीरे-धीरे ठीक होने लगता है और अवसर के अनुसार विना प्रयत्न के वाछित स्वर का वेग बढने लगता है।

कुडलिनी और सुषुम्ना

तत्र शास्त्रो के अनुसार कुडलिनी जागरण के सूत्र ये हैं—

1 चद्र स्वर को वढने दो।
2 सूय स्वर को बद करो।
3 सुषुम्ना को जगाओ।

कुडलिनी का स्थान जननेद्रिय (लिंग अथवा योनि) तथा गुदा के मध्य भाग मे है। मूलाधार चक्र का भी यही स्थान है। यह मा यता है कि कुडलिनी नागिन की तरह तीन वल बनाकर मूलाधार चक्र मे सोई रहती है। वह सुषुम्ना का द्वार बद रखती है।

कुडलिनी को जगाकर सुषुम्ना का द्वार खोलने के लिए आसन, प्राणायाम, तथा मुद्राबधो के उपाय योगीजनो द्वारा सुझाए गए है। इन उपायो के अभ्यास से प्राण इडा और पिंगला से निकलकर सुषुम्ना मे प्रविष्ट हो जाते है। इससे कुडलिनी जाग्रत हो जाती है। वह निम्न चक्रो का भेदन करती हुई सहस्रार तक पहुचती है।

सहस्रार चक्र से पूर्व निम्न चक्रो के नाम तथा उनके स्थान इस प्रकार है—

1 मूलाधार चक्र (स्थान गुदा)
2 स्वाधिष्ठान चक्र (स्थान जनन-अग)
3 मणिपूर चक्र (स्थान नाभि)
4 अनाहत चक्र (स्थान हृदय)
5 विशुद्धि चक्र (स्थान कठ)
6 आज्ञा चक्र (स्थान भ्रूमध्य)

इन चक्रो का सम्मिलित नाम पट्चक्र है। जब कुंडलिनी इन पट्चक्रो का भेदन करके सहस्रार तक पहुचती है तो योगी को परमानद की प्राप्ति होती है।

स्वरयोग के अनुसार सुपुम्ना

कुडलिनी जागरण के क्षेत्र मे सुपुम्ना की जो भूमिका है, उससे अलग रहकर हम 'स्वरयोग' की दृष्टि से सुपुम्ना की चर्चा करते आ रहे हैं। स्वरयोग की दृष्टि से सुपुम्ना स्वर का अधिक चलना घातक है, यह भी हम पहले कह आए है।

अपने अनुभव और अध्ययन से हमने जाना है कि सुपुम्ना स्वर का अधिक समय तक चलना आतरिक अनियमितता का सूचक होता है।

स्थूल शरीर से फूटने वाले फोडे-फुसी को देखकर हम इस परिणाम तक पहुचते हैं कि शरीर मे सचित विप त्वचा द्वारा निकलता है। मल-मूत्र का परीक्षण करके हम स्थूल शरीर मे उपजने वाले अनेक रोग जान पाते हैं। वैसे ही सुपुम्ना स्वर के अधिक देर तक जारी रहने से हम जान सकते है कि सूक्ष्म शरीर तथा स्थूल शरीर के तालमेल (Alignment) मे कुछ कमी है। जीव की अनुकूलन व्यवस्था उस तालमेल को सुधारने मे लगी हुई है। स्वस्थ व्यक्ति मे यह व्यवस्था शीघ्र ही तालमेल बिठा लेती है, किंतु यदि सुपुम्ना स्वर लगातार दो घटे से अधिक समय तक जारी रहे तो इस परिणाम तक पहुचा जा सकता है कि किसी घातक रोग की सभावना है।

यह विवरण दो घटे से अधिक समय तक लगातार चलने सुपुम्ना स्वर के विपय मे है। दस, पद्रह मिनट के लिए सुपुम्ना स्वर दिन-रात के दौरान अनेक बार चलता है और यह स्वाभाविक होता है।

तकनीकी भाषा मे हम सुषुम्ना स्वर को मध्यम स्वर (Neutral Breath) कह सकते है। जिस प्रकार कार, स्कूटर या मशीन का गिअर (Gear) बदलते समय मध्य मे न्यूट्रल गिअर अवश्य आता है, उसी प्रकार शरीर की अनुकूलन व्यवस्था एक स्वर से दूसरे स्वर का वेग बदलते समय कुछ मिनट के लिए दोनो स्वरो को सम करती है। यही समय सुषुम्ना स्वर का होता है।

सुषुम्ना स्वर के अधिक समय तक जारी रहने पर चिंता करने की आवश्यकता नही होती, अपनी दिनचर्या पर गौर करने की जरूरत होती है।

एकदम ताप या शीत के बढने से, पाचन-व्यवस्था के गडबडाने से, लबे समय तक तनाव की अवस्था मे रहने से सुषुम्ना स्वर लबे समय का हो जाता है। उस लबे काल को सीमित करने के लिए आहार, व्यवहार, विचार मे परिवर्तन करना चाहिए, इससे स्वर अनुकूल हो जाता है।

यहा तक की चर्चा तन के स्वास्थ्य के सबध मे हुई है। अब मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से स्वरयोग का उपयोग समझें।

मन की शाति के लिए स्वरयोग की भूमिका

शाति मन का आहार है। शाति मन को सबल बनाती है। डावाडोल मन को स्थिर करती है।

अशाति मन का प्रदूषण है। यह मन को अस्वस्थ बनाती है।

मन के प्रदूषण तथा कलुष के विषय मे हम इस पुस्तक मे पहले कह आए हैं। अब मन की शाति के लिए 'स्वरयोग' की भूमिका पर विचार करते हैं।

हमारा मन कभी धन की इच्छा करता है कभी प्रिय-अप्रिय पात्रों के विषय मे सोचता है। कभी भूतकाल पर पछताता है, कभी भविष्य की आशका या आशा करता है।

सास एक माध्यम है जिसका निरीक्षण करते हुए हम अपने-

आपमे स्थित होते हैं। उस समय हम बाहर के ससार से कटे हुए होत हैं। वही समय हमारे लिए शाति का समय होता है। वह समय क्षणभर का भी हो सकता है और अभ्यास द्वारा उस समय को घटो तक बढाया भी जा सकता है।

स्वरयोग द्वारा हम खेल-खेल मे हर समय सास का निरीक्षण करते है। इस दृष्टि से हम स्वरयोग के अभ्यास द्वारा हर समय ध्यान की अवस्था से रह सकते है। यथा

भोजन करते समय स्वर कौनसा चल रहा था, भोजन के बाद कौनसा। अत्यत भूख के समय हमारा कौनसा स्वर प्रभावी था। और खूब छककर खाने के बाद कौनसा था। इसी प्रकार गर्मी, सर्दी आदि के समय अपने स्वर का निरीक्षण करते रहना खेल जैसा काय है।

अपना स्वर जाचते समय हमारे सामने कोई बाधा नही होती। सडक पर चलते समय, ग्राहक, मित्र, अफसर या अधीन व्यक्ति से बातचीत करते समय हम सास के निरीक्षण का खेल जारी रख सकते है।

जो साधना हम खाते पीते, चलते-फिरते, कार्यालय आदि के समय करते रह सकते हैं, उस साधना द्वारा हम हर समय अपने-आपको अपने-आपमे स्थित रख सकते हैं। समाधि की ओर बढने वाले एक पग 'ध्यान' का उद्देश्य भी तो यही है।

यदि हमारे नियमित सास का नियम टूटने लगे तो हम समझ सकते हैं कि कही तन और मन मे तालमेल नही रहा। अपनी दिनचर्या का विश्लेषण करके हम यह जाच सकते है कि हमारी कौनसी अनियमितता के कारण मन और तन मे प्रतिकूल अवस्था उत्पन्न हुई।

अपने विश्लेषण द्वारा हम सास की अनियमितता का रहस्य पा सकते हैं। अपनी दिनचर्या तथा आहार-व्यवस्था मे परिवतन

करके हम बिना कुछ खर्च किए आपने-आपको स्वस्थ रख सकते हैं। उस दृष्टि से स्वरयोग हममे अपना विश्लेषण करने की आदत डालता है।

अपना स्वर-चक्र जानने की विधि

अपना नियमित स्वर-चक्र जानना हो तो कुछ दिन के लिए, अपनी जेब मे हर समय कागज-कलम रखे और अपने प्रत्येक काय करने के दौरान थोडी-थोडी देर बाद अपने स्वर की जाच करें कि कौनसा स्वर चल रहा है।

जिस समय जाच करें वह समय नोट करके उसके आगे 'दाया' या 'बाया' जो भी स्वर चल रहा हो वह स्वर नोट कर ले। साथ ही स्वर बदलने का समय भी। अगली जाच के दौरान जब पाए कि स्वर फिर बदला तो वह समय कागज पर लिखे और अपना बदला हुआ स्वर नोट कर लें।

यदि सभव हो तो यह भी नोट करे कि भोजन, शयन, स्नान आदि की क्रियाओ से पहले और बाद मे कौनसा स्वर चला है। अति सर्दी अति गर्मी के समय भी स्वर नोट करें।

रात को बिस्तर के सिरहाने भी यह कागज-कलम अपने पास रखें। जब भी नीद खुले, स्वर नोट कर ले।

प्रतिदिन नया कागज रखे। सप्ताहभर की इस जाच से आप अपना औसत, स्वर-चक्र जान लेंगे।

आरभ मे आपको स्वर का यह हिसाब किताब रखना अजीब लगेगा लेकिन कुछ ही दिनो मे आपको इस जाच मे रस आने लगेगा। फिर कागज-कलम की जरूरत नही होगी। आपका ध्यान बिना किसी यत्न के हर समय सांस की ओर रहेगा और आप बिना नासिका छिद्र को छुए अपने स्वर का वेग जान लेंगे।

इस ध्यान की साधना करके आप कुछ ही दिनो मे अपने भीतर

दिव्यता प्रकट होती अनुभव करेंगे और जब कभी आप तनाव से उद्विग्न होगे तो अपने स्वर की ओर ध्यान देते ही आपकी उद्विग्नता, आपका तनाव दूर हो जाएगा और आप एक नये व्यक्ति के रूप मे निरखते चले जाएगे।

स्वन-निरीक्षण की बाधाए

काम, क्रोध, ईर्ष्या, भय आदि तीव्र भावो और तनावो के समय स्वर की जाच करना साधक जन भूल जाते हैं। ये तनाव और आवेश आधी के समान आते है और व्यक्ति तन-मन की सुधि गवा बैठता है।

जो व्यक्ति ऐसे आवेश के अवसर पर अपने स्वर का निरीक्षण करना याद रख सकते है वे अपने स्वामी आप हो जाते हैं। काम, क्रोध आदि भाव उस स्वामी के अधीन हो जाते हैं। मन, मस्तिष्क की जानकारी मे होने वाला कोई भी आवेश, कोई भी भाव हानिकर नही रहता।

अतिम बात

जो जन सास लेने और छोडने का कार्य नासिका से लेते हैं, उनकी नासिका के छिद्र हर समय खुले रहते हैं। फलस्वरूप वे बिना यत्न के अपने स्वर का वेग जान सकते हैं।

जो जन मुख से सास लेने के आदी है उनके नासिका-छिद्र बद हो जाते हैं। वे यदि सास के लिए नाक का नियमित प्रयोग करने लगेंगे तो उनकी नाक सदा खुली रहेगी।

तन और मन के स्वास्थ्य के लिए नाक द्वारा सास लेने और छोडने का अभ्यास डालना चाहिए।

परिशिष्ट :
स्वाध्याय के सूत्र

योगदर्शन के चौथे नियम 'स्वाध्याय' का उद्देश्य है दृष्टिकोण का व्यापक होना। इस उद्देश्य के लिए महान ग्रंथों तथा महान् व्यक्तियों के लेखों, कथनों से कुछ अंश प्रस्तुत हैं। इनके मनन से आत्मविश्लेषण की प्रवृत्ति बनती है। आत्मविश्लेषण अपने भीतर प्रवेश की कुंजी है।

(स्वामी) अखडानंद सरस्वती

—मनुष्य का जीवन श्रद्धा और विवेक, इन दोनो से चलता है। सब लोग विवेकी बन जाए, यह योजना बहुत अच्छी है परतु सारी जनता एक जैसी शिक्षित नही हो सकती।
विवेकी न हो परतु श्रद्धा हो तो वह दूसरे के विवेक से लाभ उठा सकता है। दूसरे के विवेक से लाभ उठाने की योग्यता का नाम 'श्रद्धा' है।

(श्री) अरविंद

—जीवन मे निरतर ताजगी और अटूट दिलचस्पी तभी मिल सकती है जब भीतरी विकास निरतर होता रहता है।

(हजरत) अली

—इस बात का महत्त्व नही कि मनुष्य मरता किस प्रकार है, महत्त्व इस बात का है कि वह जीवित किस प्रकार रहता है।

उपनिषद्

—जो अविद्या अर्थात् केवल भौतिक ज्ञान की उपासना करते है, वे घने अधकार मे जा पहुचते हैं, और जो विद्या अर्थात् अध्यात्म-

ज्ञान मे ही डूबे रहते है, (भौतिक जगत् की कुछ भी परवाह नही करते) वे उससे भी अधिक घने अधकार मे जा पहुचते है ।

—आहार की शुद्धि होने पर अत करण की शुद्धि होती है ।

—मनुष्य की तृप्ति धन से नही हो सकती ।

—परमात्मा ने इद्रियो को स्वभावत बहिर्मुख बनाया है । इसलिए मनुष्य बाहर देखता है, अपने अदर नही । कोई बिरला धीर पुरुष ही इद्रियो का सयम करके अपनी अतरात्मा को देखता है ।

—जिसका बुद्धि रूपी सारथी चतुर हो और मन रूपी लगाम जिसके काबू मे हो, वह विश्व को पार करके ईश्वरीय परमपद तक पहुचता है ।

कथासरित्सागर

—दुर्जनो का सग ही व्यसन रूपी वक्ष का मूल है ।

कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी

—जब तक लोग स्वय को सुधारने का प्रयत्न नही करेगे, तब तक कोई सुधार होना असभव है ।

कालिदास

—दु ख के बाद जो सुख आता है, वह ज्यादा आनदमय होता है, जसे धूप से जले हुए को वृक्ष की छाया अधिक शाति देती है ।

—बुराई नौका मे छिद्र के समान है । वह छोटा हो या बडा, नौका को डुबो देता है ।

कुग फूत्जी (कनफ्युशियस)

—साप के लिए दूध, बदर के लिए छुरी और बालक के लिए आग की जो खतरनाक उपयोगिता है, वही भयकर स्थिति विद्या के प्रसग मे मूर्ख की है ।

—पानी मे यह विशेषता है कि वह जिस छिद्र मे प्रवेश करना चाहे,

कर सकता है, अतर्यामी बनकर धरती और हवा मे निवास कर सकता है। यह इसलिए कि नम्रता उसका स्वभाव है। नम्रता के पास स्वर्ग के प्रवेश की कुजी है।

—बिना मनन के ज्ञान बेकार है, बिना ज्ञान के मनन खतरनाक है।

—जिनका अपने मन पर नियन्त्रण है, वे बहुत कम गलती करते है।

कुरान

—जिन पर धर्मग्रथ लादा गया, उन्होने उसे पढा नही, वे उस गधे के समान है जो पीठ पर किताबें लादे हुए है।

—हे श्रद्धावानो! ऐसी बात क्यो कहते हो, जो करते नही।

—जिसने धन इकट्ठा किया और उसे गिनता रहा, वह इस भ्रम मे है कि धन उसे जीवित रखेगा।

—जिसने प्राणहानि के बदले या युद्ध छेडने के बदले या अन्य किसी कारण से हत्या की, उसने मानो पूरी मानव जाति की हत्या कर दी और जिसने किसी प्राणी को बचाया उसने मानो सपूण मानव जाति को जीवन प्रदान किया।

खलील जिब्रान

—हम शब्दो के द्वारा अपनी बात कहे, इससे कही अच्छा है कि हमारा आचरण हमारी बात कहे।

—एक बार एक आदमी ने मेरे पास बैठकर मेरी रोटी खाई और मेरी ही दी हुई शराब पी। इसके बाद वह मेरी खिल्ली उडाता चल दिया।

वह फिर आया और उसने मुझसे फिर रोटी और शराब मागी। तब मैं उसे खरी खोटी सुनाने लगा। इस पर देवदूतो ने मेरी खिल्ली उडाई।

(मुनि) गणेशवर्णी

—जिसने अपने मन और इद्रियो को वश मे नही किया, उसकी

उपासना ऐसी समझनी चाहिए जैसे हाथी का नहाना कि इधर तो नहाया, उधर शरीर पर धूल डालकर फिर ज्यो-का-त्यो हो गया।

—आत्मा जिस कार्य से सहमत न हो, उस कार्य के करने मे शीघ्रता न करो।

(महात्मा) गाधी

—मनुष्य की शाति की कसौटी समाज मे ही हो सकती है, हिमालय के शिखर पर नही।

—सच्चरित्रता के अभाव मे केवल बौद्धिकता सुगधित शव के समान है।

—दोषो से हम सभी भरे है मगर दोषमुक्त होने का प्रयास करना हम सबका कर्तव्य है।

—अत्यधिक विरोधी परिस्थितियो मे ही मनुष्य की परीक्षा होती है।

—अपनी आवश्यकताए कम करके आप वास्तविक शाति प्राप्त कर सकते है।

—सच्चा सुख बाहर से नही मिलता, अतर से मिलता है।

—अगर हम अपने को परमात्मा की इच्छा का यत्र बना दे, तो हमे किसी भी क्षण चिंता नही करनी पडेगी।

—ईश्वर को जानने पर मनुष्य अपने आप रजकण हो जाता है।

चाणक्य

—जो अपने निश्चित कार्यों अथवा वस्तुओ को छोडकर अनिश्चित की चिंता मे पडा करता है, उसका अनिश्चित तो नष्ट है ही, निश्चित भी नष्ट हो जाता है।

—हरएक पर्वत मे मणि नही होती, हरएक हाथी मे मुक्तामणि नहीं होती। साधु लोग सभी जगह नही मिलते, हर एक वन मे चदन नही होता, अच्छी-अच्छी चीजें विशेष स्थानो पर ही मिलती हैं।

—न तो ससार मे कोई तुम्हारा मित्र है और न शत्रु, तुम्हारा अपना व्यवहार ही शत्रु अथवा मित्र बनाने का उत्तरदायी है।

जयशकर प्रसाद

—राजभवनो के मोह से मनुष्य आजीवन मानसिक कारावास भोगता है।

—अधिकार-सुख कितना मादक और सारहीन है।

—अधिक हर्ष और अधिक उन्नति के बाद ही अधिक दुख और पतन की बारी आती है।

जवाहरलाल नेहरू

—आपत्तिया हमे निरतर बलवान बनाती हैं।

—कठिनाइया हमे आत्मज्ञान कराती हैं कि हम किस मिट्टी के बने हैं।

जनेंद्रकुमार

—ईर्ष्या अपनी हीनता के बोध मे से जन्म लेती है और वह उस हीनता को दूर नही करती, सिर्फ दबाती है।

—दुख को यदि हम भगवान के प्रसाद के रूप मे ले सके तो सचमुच वह जीवन को चमका सकता है।

(सत) ज्ञानेश्वर

—मूर्खों से बहस करके कोई भी व्यक्ति बुद्धिमान नही कहला सकता।

—क्रोध से मानव क्रोधपात्र का ही अपमान नही करता, अपितु अपनी प्रतिष्ठा भी गवाता है।

—ईश्वर को नापना आसमान पर गिलाफ चढाने के समान है।

टालस्टॉय

—असत्य मार्ग पर हम चाहे जितनी दूर जा चुके हो, वहा से लौट पडना उस पर चलते रहने से बेहतर है।

तिरुवल्लुवर

—ईर्ष्या करने वाले के लिए ईर्ष्या की बला ही काफी है। यह इसलिए कि यदि उसके दुश्मन उसे छोड भी दें तो भी उसकी ईर्ष्या ही उसका सर्वनाश कर देगी।

—बुराई से बुराई पैदा होती है, इसलिए आग से भी बढकर बुराई से डरना चाहिए।

—दगाबाजी से धन जमा करना ऐसा है जैसा कि मिट्टी के कच्चे घडे मे पानी भरकर रखना।

—बडप्पन सदैव ही दूसरो की कमजोरियो पर परदा डालना चाहता है, किंतु ओछापन दूसरो की कमिया बताने के सिवा और कुछ करना ही नही जानता।

—निधना को देना ही सच्चा दान है, अन्य सब प्रकार का देना उधार देने के समान है।

—त्याग से अनेक प्रकार के सुख उत्पन्न होते है, इसलिए अगर उन्हे अधिक समय तक भोगना चाहो तो शीघ्र त्याग करो।

—शानदार रोबीला चेहरा किस काम का जबकि दिल के अदर बुराई भरी हुई है।

—इच्छा कभी तृप्त नही होती। अगर कोई मनुष्य उसको त्याग दे तो वह उसी दम सपूर्णता को प्राप्त कर लेता है।

—जब घर मे अतिथि हो तब चाहे अमृत ही क्यो न हो, अकेले नही पीना चाहिए।

(महर्षि) दयानन्द सरस्वती

—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति मे सतुष्ट न रहना चाहिए, सबकी उन्नति मे ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

—जो भी मनुष्य अहकार करता है उसका एक न-एक दिन पतन अवश्य होगा।

धूमकेतु

—समाज की अपूर्णता के विषय मे नही, अपनी अपूणता के विषय मे विचार करने वाला व्यक्ति एक दिन समाज की अपूणता दूर करने की सामर्थ्य प्राप्त करता है।

—हमारी वास्तविक निधनता यह है कि दूसरे को सुधारने का अधिक-से-अधिक प्रयत्न करते हैं और स्वय को सुधारने का अल्प मे अल्प।

(मुनि) नथमल

—परिपक्व के लिए बधन नही होता। तरु फल को तब तक बाधे रखता है जब तक वह पूरा पक नही जाता।

—मन लोभ से भरा था तब मुझे वे लोग बडे लगते थे, जिनके पास बहुत था। मन लोभ से खाली हुआ तो लगा कि महान् वे हैं, जिनके पास अपना कुछ भी नही है।

—मिलन मे सुख है और विरह मे वेदना। मानव मिलन-प्रेमी है है और विरह विद्वेषी है। पर उसने यह कब सोचा कि विरह के बिना मिलन मे सुख कब होता है।

नरेंद्र कोहली

—यद्यपि व्यक्ति के अदर वही जीवनी शक्ति है जो स्वय सृष्टि अथवा प्रकृति है किंतु जब शेष सृष्टि से स्वय को काट, एक व्यक्ति अपने अहकार को सच मान, स्वय को पूण समझ अपने आपको कर्त्ता घोषित करता है, तो वह एक भ्रम पालता है।

—जिन्होने अन्यायपूर्वक, अधर्म से धन का परिग्रह कर लिया है—वे समझते है कि उन्होने एक शक्ति अर्जित की है। पर वे यह नहीं समझते कि वस्तुत उन्होने, जिन्हे वचित किया है, उनकी शत्रुता ही अर्जित की है।

(गुरु) नानक

—यदि तू मस्तिष्क को शात रख सकता है तो तू विश्व पर विजयी होगा।

पचतत्र

—दूसरो को उपदेश देना सरल है।

—मूर्ख धन के लिए जो कष्ट सहते हैं, उसके शताश भाग से मोक्ष की चेष्टा करने वाले को मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

प्रेमचद

—विपत्ति से बढकर अनुभव सिखाने वाला कोई विद्यालय आज तक नही खुला।

—ज्ञान भी जब सीमा के बाहर हो जाता है तो नास्तिकता के क्षेत्र मे जा पहुचता है।

—जिसकी आत्मा जितनी विशाल है, वह उतना ही महापुरुष है।

बुद्ध (धम्मपद)

—जो दूसरो के अवगुणो की चर्चा करता है, वह अपने अवगुण प्रकट करता है।

—वैर से वैर कभी शात नही होता, अवैर से शात होता है।

—जागने वाले की रात्रि लबी होती है। थके हुए के लिए रास्ता लबा होता है। सद्धर्म को न जानने वाले मूर्खो के लिए ससार लबा होता है।

—युद्ध मे हजारो मनुष्यो को जीतने वाले मे बडा विजेता वह है, जिसने अपने-आपको जीत लिया है।

—अल्प ज्ञानी मनुष्य बैल के समान बढता है। उसका मास बढता है पर प्रज्ञा नही बढती है।

—विजय शत्रुता को उत्पन्न करती है। पराजय को त्यागकर शात हुआ मनुष्य सुखपूर्वक सोता है।

—जो उठे हुए क्रोध को, भ्रांत हुए रथ के समान रोक लेता है, उसे मैं सारथी कहता हू । दूसरे जन तो केवल लगाम पकडने वाले हैं ।

—दूसरो का दोष देखना सरल है किंतु अपने दोष देखना कठिन है ।

(श्री) ब्रह्म चैतन्य

—जिस घर मे शाति है, वहा भगवान वास करते है ।

भर्तृहरि

—सासारिक भोगो को हमने नही भोगा अपितु उन्होंने हमे भोग लिया है । तप नही तपा गया प्रत्युत हम ही तप्त हो गए । समय नही बीता प्रत्युत हम ही बीत गए । तृष्णा जीर्ण नही हुई प्रत्युत हम ही जीर्ण हो गए हैं ।

—दुनिया मे प्रसन्न रहने की चाबी अपनी जरूरतो को कम करना है ।

—कृपण से बडा दाता न कोई हुआ, न होगा क्योकि वह तो छुआए बिना ही सारा धन दूसरो को दे जाता है ।

—धन की तीन गतिया होती है—दान, भोग और नाश । जो न दूसरो को दे, न स्वय भोगे, उसके धन की तीसरी गति होती है ।

—जब मुझे (शास्त्रो का) थोडा से ज्ञान था, तब मद से उन्मत्त हाथी की भाति मैं अहकार मे झूमता था और मन मे सोचता था कि मैं तो सर्वज्ञ हू । परतु जब मैंने विद्वानो के बीच रहकर कुछ-कुछ सीखना आरभ किया तब यह बात समझ मे आई कि मैं तो मूर्ख हू और फिर मेरा सपूर्ण अहकार ज्वार की तरह समाप्त हो गया ।

—फल लगने पर तरु झुक जाते हैं । नये बरसने वाले जल से भरे बादल दूर तक झुक जाते हैं तथा सत्पुरुष समृद्धि के आधिक्य से अतीव नम्र हो जाते हैं ।

मनु

—प्रत्येक कार्य किसी कारण का परिणाम है ।
—शूद्र व्यक्ति ब्राह्मण के कार्य करने से ब्राह्मण हो जाता है, और ब्राह्मण शद्र के काय करने से शूद्र ।
—भोगो के भोगने से वासना तृप्त नही होती जैसे अग्नि मे ईधन और घी डालने से वह और प्रचड होती है ।

(युवाचाय) महाप्रज्ञ

—सत्य अच्छा है पर उसे पाने का उतना ही यत्न करो जितना सहन कर सको । तुमने देखा होगा सामान्य प्रकाश मे मनुष्य देख पाता है किंतु प्रखर प्रकाश के सामने आखें चौंधिया जाती हैं ।
—स्मृति के लिए तुम्हारे पास विशाल अतीत है, कल्पना के लिए असीम भविष्य है किंतु करने के लिए केवल वर्तमान है, जो बहुत ही सीमित है ।
—यह कैसा अचरज ! जो चाहिए उसका भान नही है और उसके लिए तड़प रहे है जो नही चाहिए ।
—जितना नीचे देखता हू अपने-आपमे बहुत विशाल लगता हू । जब थोडा ऊपर देखता हू तो मेरी विशालता असीम गगन मे विलीन हो जाती है ।

महाभारत

—सुख के बाद दु ख और दु ख के बाद सुख—ये दोनो गाडी के पहिये के समान है ।
—किसी के प्रति मन मे क्रोध लिए रहने की अपेक्षा उसे तत्काल प्रकट कर देना अधिक अच्छा है, जैसे क्षणभर मे जल जाना देर तक सुलगने से ज्यादा अच्छा है ।
—वास्तविक धम यह है कि जिन बातो को मनुष्य अपने लिए अच्छा न समझे, दूसरो के साथ भी वैसा व्यवहार न करे ।

(भगवान) महावीर

—घृणित वह नही जिससे घृणा की जाती है, किंतु घृणित वह है जो घृणा करता है, क्योकि उसके ही हृदय मे घृणा भरी है।

—बगुले से अडा और अडे से बगुला उत्पन्न होता है, उसी प्रकार मोह से तृष्णा और तृष्णा से मोह उत्पन्न होता है।

—क्रोध प्रेम का नाश करता है। मान से विनम्रता नष्ट होती है। माया (कपट) से मित्रता का नाश होता है और लोभ से सर्वनाश होता है।

—साधक जनो को चाहिए कि क्रोध को शांति से नष्ट करें। विनम्रता से मान को जीतें। सरलता से कपट का नाश करें और सतोष से लोभ पर विजय प्राप्त करे।

(श्री) मा

—सबसे पहले पूर्ण रूप से अपने को जानो और फिर अपने ऊपर पूर्ण सयम स्थापित करो। प्रत्येक क्षण अभीप्सा करते रहने से तुम ऐसा करने मे समर्थ हो सकते हो।

—जीवन मे ऐसा कभी नही कहा जा सकता कि इसे करने का समय अभी नही आया है। यह भी नही कहा जा सकता है कि अब इसे करने का समय नही रहा।

—जब हम अधीर नही होते, तभी हम सत्कर्म कर सकते है। उन्हे उपयुक्त समय पर उपयुक्त ढग से कर सकते है।

(हजरत) मुहम्मद

—ताकतवर वह नही जो दूसरो को पछाड दे, बल्कि ताकतवर वह है जो गुस्से के वक्त अपने पर काबू रखे।

यीशु

—बीमारो को चगा करो। कोढियो की सेवा करो। मुर्दों को

उठाओ । दुष्टो को निकालो । खुले हाथ से तुम्हे मिला है, खुले हाथ से दो ।

योगवासिष्ठ

—पानी सतत-प्रवाह क्रिया से पहाडो को गला देता है । कठोर पत्थरो को चिकना बनाता है । अभ्यास से क्या नही सिद्ध होता ?

—मनुष्य तन्मय होकर जैसी भावना करता है, और जैसा होना चाहता है, वैसा ही हो जाता है ।

—अपने भीतर ही यदि शाति मिल गई तो सारा ससार शातिमय प्रतीत होता है ।

—मानव मे सद्‌गुण तभी तक है जब तक वह तृष्णा से दूर है । तृष्णा का स्पर्श होते ही सब गुण गायब हो जाते है ।

(महर्षि) रमण

—अहभाव का नाश करना और आत्मा मे अवस्थित होना ही परम-पद है ।

—जो कुछ हम दूसरो को देते हैं, वास्तव मे वह सब हम अपने-आपको दे रहे है ।

रवींद्रनाथ ठाकुर

—ईश्वर का दाहिना हाथ कोमल, परतु बाया बहुत कठोर है ।

—मनुष्य जब पशु का सा आचरण करता है तो पशुओ से भी नीचे गिर जाता है ।

—सजा देने का अधिकार केवल उसे है जो प्रेम करता है ।

—जो व्यक्ति सत्य के साथ कर्तव्यपरायणता मे लीन है, उसके मार्ग मे बाधक होना सरल काय नही है ।

—नदी का यह किनारा आह भरकर कहता है, "सामने के किनारे पर ही समग्र सुख है ।" सामने का किनारा पहले वाले से भी

गहरी आह भरकर कहता है, "जगत मे जितना सुख है वह सारा उस किनार ए्र है ।"

(डॉ०) राधाकृष्णन्

—ईश्वर की कोई बौद्धिक परिभाषा नही दी जा सकती । उसका आत्मा के सहारे अनुभव किया जा सकता है ।

—चिडियो की तरह हवा मे उडना और मछलियो की तरह पानी मे तैरना सीखने के बाद अब हमे इसानो की तरह जमीन पर चलना सीखना है ।

—रोटी के ब्रह्म को पहचानने के बाद ज्ञान के ब्रह्म से साक्षात्कार अधिक सरल हो जाता है ।

रामकृष्ण परमहस

—पानी और उसका बुलबुला एक ही चीज है, उसी प्रकार जीवात्मा और परमात्मा एक ही चीज है, अतर केवल यह है कि एक परिमित है, दूसरा अनत, एक परतत्र है, दूसरा स्वतत्र ।

—जो ईश्वर को पा लेता है, वह मूक और शात हो जाता है ।

—केवल शास्त्र पढकर ईश्वर की व्यवस्था करना ऐसा है जसा बनारस शहर को सिर्फ नक्शे मे देखकर किसी को उसका विवरण सुनाना ।

—ससार मे रहा लेकिन ससारी न बनो ।

(स्वामी) रामतीथ

—निराशावादी बुराई को ढूढता है और आशावादी अच्छाई को। निराशावादी चिता के भार से दु खी और आशावादी प्रसन्नता की खुशबू मे मुसकराकर आगे बढता है ।

—प्राथना करना कुछ शब्दो को दुहराना नही है । प्राथना का अथ है परमात्मा का मनन और अनुभव करना ।

—इच्छाओं से ऊपर उठ जाओ, वे पूरी हो जाएगी, मागोगे तो उनकी पूर्ति तुमसे और दूर जा पडेगी ।

—कर्म करना जीवन के आनद के लिए आवश्यक है । कम करते समय मनुष्य अपने दु ख को भी भूल जाते हैं ।

(समर्थ गुरु) रामदास

—विश्राम क्या है ? स्वय को ईश्वरेच्छा पर छोड देना ।

—तुम्हारा अतिम ध्यय शाति है । उसे प्राप्त करने का उपाय त्याग और सेवा है ।

—हम दुनिया को नही बदल सकते, मगर दुनिया के प्रति अपना दृष्टिकोण बदल सकते हैं ।

वालतेयर

—मनुष्य जितना छोटा होता है, अहकार उतना ही बडा होता है ।

वाल्मीकि

—सत दूसरो को दु ख से बचाने के लिए कष्ट सहते हैं । दुष्ट लोग दूसरो को दु ख मे डालने के लिए कष्ट सहते हैं ।

(मुनि) विद्यानद

—यदि तुम अच्छा बनना चाहते हो तो अपने-आपको सबसे बुरा समझो ।

विनोबा भावे

—डूबने वाले के प्रति सहानुभूति का मतलब उसके साथ डूबना नही है, बल्कि तैरकर उसको बचाने का प्रयत्न करना है ।

—जिस त्याग से अभिमान उत्पन्न होता है, वह त्याग नही । त्याग से शाति मिलनी चाहिए । अतत अभिमान का त्याग ही सच्चा त्याग है ।

—'मुझे अभिमान नही है' ऐसा कहना सबसे बडा अभिमान है।
—गरीब वह नही है जिसके पास कम है, बल्कि धनवान होते हुए भी जिसकी इच्छाए कम नही है, वह सबसे अधिक गरीब है।

(स्वामी) विवेकानद

—यदि तुम्हारा अहकार चला गया है तो किसी भी धम-पुस्तक की एक पक्ति भी पढे विना व किसी भी देवालय मे पैर रखे विना, तुम जहा बैठे हो, वही तुम्हे मोक्ष प्राप्त हो जाएगा।
—इच्छा का समुद्र सदा अतृप्त रहता है। उसकी मागे ज्यो ज्यो पूरी की जाती हैं, त्यो-त्यो और गजन करता है।
—धम को लेकर कभी विवाद न करो। धम सबधी सारे विवाद और झगडे केवल यही दर्शाते है कि यहा आध्यात्मिकता का अभाव है।

विष्णु शर्मा

—सपत्ति मिलने पर जो हप मे आपे से बाहर नही हो जाता, विपत्ति आने पर जो विकल होकर रोने नही लगता, युद्ध आ पडने पर जो कायर नही हो जाता, त्रिलोक मे ऐसे पुत्र शिरोमणि को पैदा करके माता धन्य हो जाती है।

वेद

—ईर्या के पथम वेग को हम शात करें। फिर वेग से उत्पन्न ज्वाला को भी हम शात करे। उसके उपरात हृदय-अग्नि को, उससे उपजे शोक को निर्मल करें।
—हे भरी विपद्, तुझे मेरा नमन हो, तू मरी लाह बेडियो को, बधनो को काट दे। तुझे नियामक यम ने मेरा हित करने के लिए भेजा है। उस मृत्यु रूपी यम को मेरा प्रणाम।
—अनुदार व्यक्ति व्यथ ही अन्न-धनादि प्राप्त करता है, वह न तो

शासक को पुष्ट करता है न ही मित्रों को, वह अकेला खाने वाला पापी है।

—मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

—हम किसी की निंदा न करें।

—सब मनुष्यों को चाहिए कि वे जिस प्रकार अपने लिए उत्तम पदार्थ चाहते हैं उसी प्रकार अन्य जनों के लिए भी इच्छा करें।

(महर्षि) वैशम्पायन

—जिस प्रकार काठ अपने ही अंदर से प्रकट हुई अग्नि द्वारा भस्म होकर खत्म हो जाता है, उसी प्रकार मनुष्य अपने ही भीतर रहने वाली तृष्णा से नाश को प्राप्त होता है।

शतपथ ब्राह्मण

—जो बहुत घमंड करते थे, वे ही अपने घमंड के कारण गिरे, इसलिए किसी को घमंड नहीं करना चाहिए। घमंड ही हार का द्वार है।

—अति अभिमान तिरस्कार का मुंह देखता है।

शरच्चंद्र

—एक आदमी दूसरे के मन की बात जान सकता है तो केवल सहानुभूति और प्यार से, उम्र और बुद्धि से नहीं।

—अति संयम भी एक प्रकार का असंयम है।

—जीवन की बहुत-सी बड़ी चीजों को हम तब पहचान लेते हैं, जब उन्हें खो देते हैं।

(स्वामी) शिवानंद

—जिस प्रकार अच्छे फल टोकरी में चुनकर रख लिए जाते हैं और सड़े गले फलों को फेंक दिया जाता है उसी प्रकार मन में अच्छे विचारों का रख लें और बुरे विचारों को उत्सर्जित कर दें।

—सूर्य की किरणें सब पर पड़ती हैं किंतु चिकनी धातु पर उनका

प्रतिबिंब चमकता है। उसी प्रकार दिव्य ज्योति सवत्र विकीर्ण है किंतु विशुद्ध अत करण पर उसका बिंब पडता है।

(स्वामी) सत्यानद

—जब आप शारीरिक अशुद्धियो से मुक्त होने के लिए कोई रेचक औषधि लेते है तो शरीर से निकलने वाले द्रव्य बडे दुर्गन्धयुक्त होते हैं, चेतना की शुद्धि से भी बुरे विचार तथा अनुभव बाहर निकलते है।

(शेख) सादी

—मैं ईश्वर से डरता हू, ईश्वर के बाद मुख्यत उससे डरता हू जो ईश्वर से नही डरता।

—ईर्ष्यालु मनुष्य स्वय ही ईर्ष्याग्नि मे जला करता है। उसे और जलाना व्यथ है।

—अगर तुझे यश चाहिए तो दान कर। जब तक दाना बिखेरा नही जाता, नही उगता।

हाफिज

—अगर तू तरक्की करके बडा आदमी हो जाए तो भी अपने रास्ते से न डिग। तू कमान से छोडे हुए तीर की तरह है, जो थोडी देर हवा मे उडकर जमीन पर गिर जाता है।

—किसी भी हालत मे अपनी ताकत पर घमड न करो। यह बहु-रूपिया आसमान हजारो रग बदलता है।

—कम ऐसे कर जसे तूने सौ वष जीना है, शुक्र ऐसे अदा कर जैसे तू कल नही रहेगा।

●●●

'माईंड एण्ड बॉडी रिसर्च सेंटर'
की ओर से
अब तक प्रकाशित, प्रचारित
पुस्तकों का परिचय अगले पृष्ठों पर देखें—

ये सभी पुस्तकें
माईंड एण्ड बॉडी रिसर्च सेंटर
से मंगाई जा सकती हैं।

इन पुस्तकों को डाक पैकेट द्वारा या वी० पी० पैकेट द्वारा मंगाने पर डाकव्यय अतिरिक्त लगेगा।
किंतु 45 रुपये या इससे अधिक मूल्य की पुस्तकों का मूल्य अग्रिम भेजने से डाकव्यय फ्री होगा।

अग्रिम मूल्य मनीआर्डर या बैंकड्राफ्ट द्वारा
'माईंड एण्ड बॉडी रिसर्च सेंटर' के नाम से भेजें।

रकम भेजने तथा पत्र व्यवहार का पता
माईंड एण्ड बॉडी रिसर्च सेंटर
W-21, ग्रेटर कैलाश पार्ट-1, नयी दिल्ली 110048

माईंड एण्ड बॉडी रिसर्च सैंटर
की ओर से एक युगप्रवर्तक पुस्तक

कामभाव की नयी व्याख्या

लेखक दयानद वर्मा

- यह पुस्तक काम के मानसिक तथा शरीर सबधी पक्षो पर नयी जानकारी देती है। इस जानकारी के आधार पर स्त्री-पुरपो की सैक्स सबधी बहुत सी समस्याए हल की जा सक्ती हैं।
- साहित्य, चिकित्सा, यौन-विज्ञान, मनोविज्ञान आदि अनेक क्षेत्रो के विद्वानो द्वारा इस पुस्तक की अत्यत सराहना हुई है।

पुस्तक के विषय मे कुछ प्रशसा-पत्रो का सार

लेखक ने काम सबधी सभी पक्षो का विवेचन किया है। जिज्ञासु जनो के लिए पुस्तक रुचिकर तथा ज्ञानवधक है

—आचाय प्रियव्रत शर्मा, प्रमुख आयुर्वेद सकाय
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

अग्रेजी तथा हिंदी की काम सबधी अन्य पुस्तको म ऐसी नवीन जानकारी मैंने नही पाई है। इस विषय पर अब तक छपी पुस्तको मे यह सर्वोत्तम है।

— श्री अमृतलाल नागर
साहित्यकार, लखनऊ

लेखक ने अछूते समझे जाने वाले विषय पर परपरा और आधुनिक स्थापनाओ के प्रकाश मे इस पुस्तक को लिखा है। यह पठनीय तो है ही, मननीय भी है।

—श्री अक्षयकुमार जन
वरिष्ठ पत्रकार, नयी दिल्ली

कामभाव की नयी व्याख्या

इस पुस्तक मे मनोविज्ञान तथा जीवविज्ञान के आधार पर कामभाव की व्याख्या प्रस्तुत की गई है। साथ ही काम के सास्कृतिक और सामाजिक पहलुओ को भी दृष्टि म रखा गया है। यह पुस्तक एक सराहनीय प्रयास है।

—डा० सूय गुप्ता, एसोसिएट प्रोफेसर क्लीनिकल साईकालोजी विभाग
आल इण्डिया इस्टीटयूट आफ मेडिकल साईसिज, नयी दिल्ली

लेखक ने शरीर रचना (Anatomy) तथा शरीर क्रिया विज्ञान (Physiology) सबधी महत्त्वपूर्ण उद्धरण देकर अपने निष्कष दिए हैं। ये निष्कष एकदम नये हैं और स्वीकार करने योग्य हैं।

—डा० लक्ष्मी नारायण शर्मा
यौन विशेषज्ञ, दिल्ली

एक नाजुक विषय पर लेखक ने सतुलित, सयत और समन्वयात्मक दृष्टि से वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया है।

—डा० पाण्डुरग राव
निदेशक भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता

यह पुस्तक लेखक के काम सबधी मौलिक चिंतन का सार है। मैं चाहता हू इसका अधिक से अधिक प्रचार हो।

—श्री मन्मथनाथ गुप्त
साहित्यकार, नयी दिल्ली

यह पुस्तक एक शोध काय है। कामुकता के जाग्रत होने म मन मस्तिष्क को जोडकर कौनसी ग्रथिया और अग प्रत्यग भाग लेत हैं, इसका पूरा विवरण इस पुस्तक म दिया गया है। साथ ही विवरण को उत्तेजना स रहित रखा गया है।

—श्री रामेश्वरदास गुप्त
सस्थापक धम भवन, नयी दिल्ली

इसी लेखक ने इससे पहले अपनी पुस्तक 'यौन व्यवहार अनुशीलन' म 'अनुकूलन प्रवृत्ति' की स्थापना की थी। यह पुस्तक उसी स्थापना को सिद्ध करन की नयी कडी है और लेखक की निरतर खोज का परिणाम है।

—डा० ह
मनोवि

कामभाव की नयी व्याख्या

इस पुस्तक मे मनोविज्ञान तथा जीवविज्ञान के आधार पर कामभाव की व्याख्या प्रस्तुत की गई है। साथ ही काम के सास्कृतिक और सामाजिक पहलुओ को भी दृष्टि म रखा गया है। यह पुस्तक एक सराहनीय प्रयास है।

—डा० सूय गुप्ता, एसोसिएट प्रोफेसर क्लीनिकल साईकालोजी विभाग
आल इण्डिया इस्टीटयूट आफ मेडिकल साइसिज, नयी दिल्ली

लेखक ने शरीर-रचना (Anatomy) तथा शरीर-क्रिया विज्ञान (Physiology) सबधी महत्वपूर्ण उद्धरण देकर अपने निष्कष दिए हैं। ये निष्कष एकदम नये हैं और स्वीकार करने योग्य हैं।

—डा० लक्ष्मी नारायण शर्मा
यौन विशेषज्ञ, दिल्ली

एक नाजुक विषय पर लेखक न सतुलित सयत और समन्वयात्मक दृष्टि स वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया है।

—डा० पाण्डुरग राव
निदेशक भारतीय भाषा परिषद, कलकत्ता

यह पुस्तक लेखक के काम सबधी मौलिक चितन का सार है। मैं चाहता हू इसका अधिक से अधिक प्रचार हो।

—श्री मन्मथनाथ गुप्त
साहित्यकार, नयी दिल्ली

यह पुस्तक एक शोध काय है। कामुकता के जाग्रत होने म मन मस्तिष्क को जोडकर कौनसी ग्रथिया और अग प्रत्यग भाग लेते हैं, इसका पूरा विवरण इस पुस्तक म दिया गया है। साथ ही विवरण को उत्तेजना स रहित रखा गया है।

—श्री रामेश्वरदास गुप्त
सस्थापक धम भवन, नयी दिल्ली

इसी लेखक ने इससे पहले अपनी पुस्तक 'यौन व्यवहार अनुशीलन म 'अनुकूलन प्रवृत्ति' की स्थापना की थी। यह पुस्तक उसी स्थापना को सिद्ध करन की नयी कडी है और लेखक की निरतर खोज का परिणाम है।

—डा० द्वारकाप्रसाद
मनोचिकित्सक, रांची

कामभाव की नयी व्याख्या

काम के विषय पर इतने गहन अध्ययन पर आधारित पुस्तक मैंने आज तक नहीं देखी

—श्री जगदीश ओझा
सचालक मानसायन, नयी दिल्ली

इस पुस्तक द्वारा काम-मनोविज्ञान का एक नया रूप प्रकाश म आया है। इससे हिंदी म एक नये अध्याय का सूत्रपात हुआ है

—श्री क्षेमचन्द्र सुमन
साहित्यकार, दिल्ली

यह पुस्तक स्वस्थ तथा रचनात्मक चिंतन का परिणाम है। इसम कामभाव के सबध मे अतर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाले शोध काय के निष्कष देकर इसे एक प्रामाणिक सदम ग्रथ का रूप द दिया है

—डा० एच० पी० शर्मा
साहित्य परिचय, आगरा

पुस्तक मे कामभाव के बारे मे आधुनिक खोजों को प्रस्तुत किया गया है। फिर भी सदम के अनुसार भारतीय चिंतन तथा वात्स्यायन क 'कामसूत्र' का भी उल्लेख मिलता है। पुस्तक शोधार्थियो तथा साधारण पाठको, दोनो के लिए समान रूप से उपयोगी है

—पाक्षिक 'मुक्ता' नयी दिल्ली

- चाट, रेखाचित्रो तथा फोटोग्राफ्स द्वारा इस पुस्तक मे विषय को भली भाति समझाया गया है। पुस्तक के परिशिष्ट मे कामसुख बढाने वाले प्राचीन योग तथा उपाय सकलित करके पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाया गया है।

मूल्य केवल 75 रुपए

दयानन्द वर्मा रचित

काम मनोविज्ञान विषयक मौलिक कृति

यौन व्यवहार अनुशीलन

- इस शताब्दी के मध्यकाल मे यूरोप तथा अमेरिका से उमडने वाली 'यौन क्राति' एक बवडर की तरह भारत की ओर वढ रही थी। इसके प्रभाव के कारण 'यौन स्वेच्छाचार' को आदर की दृष्टि से देखा जाने लगा था।
- दूसरी ओर विश्व का एक बडा वर्ग अति सयम पर जोर देकर 'काम' के विचार मात्र को पाप की कोटि मे ला रहा था। तभी काम का सतुलित पक्ष प्रस्तुत करने वाली यह पुस्तक प्रकाश मे आई।
- 1968 मे जब पहली बार यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी तो

मनीषी श्री रजनीश ने कहा था हिंदी मे इस भाति की विचारोत्तेजक पुस्तकें ही कहा है

वरिष्ठ चिंतक एव कथाकार श्री जने द्र के शब्दो मे इस पुस्तक के रूप में हिंदी न एक अ वषक और चिंतक को प्राप्त किया है

साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर ने कहा था इस पुस्तक की नयी स्थापनाए चौंका दने वाली हैं

यौन विशेषज्ञ डा० लक्ष्मीनारायण शर्मा के शब्दों मे यदि मैं किसी पुरस्कार-समपण समिति का निणायक होता तो इस पुस्तक को सर्वोच्च पुरस्कार के योग्य ठहराता

राष्ट्रकवि श्री रामधारी सिंह दिनकर ने कहा था इस पुस्तक के लेखक का दृष्टिकोण पवित्र और उपयोगी है

- इस पुस्तक मे पश्चिमी देशो मे बढते हुए यौन स्वेच्छाचार के परिणाम की जो आशकाए व्यक्त की गई थी वे आज 'एड्स' की महामारी के रूप मे विश्व के सामने है। और 'विश्व स्वास्थ्य सगठन' (WHO) के सचेतक 'यौन क्राति' की उपलब्धियो पर पुनर्विचार के लिए बाध्य हो गए हैं।

मूल्य 20 रुपए

दयानन्द वर्मा

के यूरोप-यात्रा के सस्मरणो पर आधारित एक रोचक पुस्तक

पश्चिम के तीन रग

- इस पुस्तक मे यूरोप के तीन नगरो, पैरिस, कोपनहैगन तथा वर्लिन के कला, सैक्स और राजनीति के रगो को अनूठे शब्द-चित्रो मे चित्रित किया गया है।

- इस पुस्तक के विषय मे वरिष्ठ साहित्यकारो की प्रतिक्रियाए इस प्रकार हैं

आचाय हजारीप्रसाद द्विवेदी लेखक ने बडी मनोहर शैली में पश्चिमी देशो का भ्रमण कराया है। कोपनगहैन के यौनाचारो का वणन किसी और के हाथ पडने पर कदाचित् भयकर हो उठता, लेखक ने बडे सयम के साथ उसका चित्रण किया है

इलाचद्र जोशो पश्चिम के तीन रगो ने मेरे मन के साथ होली खेल ली है।

डा० विजयेन्द्र स्नातक लेखक पश्चिम के विविध रगा मे भूला भटका नहीं है, और उसने भारतीय दृष्टि कही खोई नही है

डा० प्रभाकर माचवे वर्लिन की दीवार का वणन और वे अश जो मानवीय सवेदन से भरे हैं इस पुस्तक का महत्त्वपूण भाग है

- 'पश्चिम के तीन रग' हिंदी क गद्य साहित्य मे एक नया प्रयोग है और यह पुस्तक पजाव सरकार के प्रथम पुरस्कार से सम्मानित है।

मूल्य 15 रुपये

दयानन्द वर्मा रचित एक प्रगतिशील उपन्यास

जिंदाबाद मुर्दाबाद

- यह एक मजबूर व्यक्ति की कहानी है जिसकी खामोशी ने उसे गले तक फूलमालाओं से लाद दिया और जब उसकी खामोशी टूटी तो 'जिंदाबाद' शब्द 'मुर्दाबाद' मे बदल गया।

- यह उपन्यास एक नये ढग मे कही गई कहानी है। इसे पढते हुए आपको लगेगा कि कहानी की पर्तें खुलने के साथ साथ आपके सामने मनोविज्ञान, राजनीति, धम, तथा समाजशास्त्र की गुत्थिया भी खुलती चली जा रही है और आप रस और ज्ञान की गगा मे सराबोर होते जा रहे है।

- यह उपन्यास लीक पर चलते हुए समाज के सामने काम सबधी एक ज्वलत प्रश्न उपस्थित करता है। इस प्रश्न का उत्तर पाठक दे सकता है।

- इस उपन्यास का इग्लिश, उर्दू, पजाबी तथा मराठी भाषा मे अनुवाद छप चुका है।

हिंदी पुस्तक का मूल्य 15 रुपये

दयानन्द वर्मा की लेखनी से अन्य पुस्तकें

मानसिक सफलता कैसे

यह पुस्तक दैनिक जीवन मे उठने वाली मानसिक समस्याओ के व्यावहारिक हल प्रस्तुत करती है। इस पुस्तक का अनुवाद इंग्लिश, तमिल, कन्नड, उर्दू तथा पजाबी भाषा म छपकर लोकप्रिय हो चुका है। हिन्दी पुस्तक का मूल्य 5 रुपये है।

हम सब और वह

भारतीय ज्ञानपीठ की ओर से प्रकाशित इस पुस्तक म लेखक न राष्ट्रीयता, धम सयुक्त परिवार, भीख, हीनता की भावना, इच्छाशक्ति, बईमानी आदि प्रवत्तियो की मानसिकता पर प्रकाश डाला है, और विपरीत स्थितियो को अनुकूल बनाने के सुझाव भी दिए हैं। ललित शली मे एक मनमोहक रचना। मूल्य 3 रुपये।

भारत के पर्वतीय भ्रमण स्थल

दयानन्द वमा द्वारा सपादित 'प्रकाशित मन' का यह विशिष्ट सस्करण सजिल्द पुस्तक के रूप म उपलब्ध है। इसम अनेक यात्रियो के अनुभवो पर आधारित लेख सकलित हैं। इस पुस्तक के अनुसार यात्रा कायक्रम बनाकर पयटकगण अपनी यात्रा को सुगम बना सकते हैं और पाठकगण इस पुस्तक के मनोहर चित्रण द्वारा घर बैठे उन पयटन स्थलो का आनद ले सकते है। मूल्य 12 रुपये।

श्रीमद्भगवद्गीता

भारत की इस विश्वविख्यात देन पर अलग अलग मत सप्रदाय के मनीषियो न भाष्य किए हैं। दयानन्द वर्मा ने एक मनोवैज्ञानिक की दृष्टि स गीता के मम को समझने का यत्न किया है और जैसा समझा है वैसा हिंदी भावानुवाद क रूप म इस पुस्तक म प्रस्तुत कर दिया है। जेबी साईज म उपलब्ध है। मूल्य 3 रुपये।

माइड एण्ड बॉडी रिसर्च सेंटर
की ओर से
हस्तरेखाओ और हस्त-लक्षणो (पामिस्ट्री)
के विषय मे अनुसधान कार्य हो रहा है
उस अनुसधान के निष्कर्ष
इस सस्था द्वारा शीघ्र ही प्रकाशित प्रचारित होगे।

दयानद वर्मा

जन्म 1931 मुलतान (पाकिस्तान)
1960 के आसपास मानसिक समस्याओ पर आधारित इनके लेख "ज्ञानोदय' "हमारा मन" आदि पत्रिकाओं में छपते रहे हैं।
1974 से 1984 तक आध्यात्मिक सास्कृतिक पत्र "प्रकाशितमन ' का सपादन करते रहे हैं।
इससे पूर्व लेखक की रचित एव सपादित आठ पुस्तके तथा सैकडों लेख प्रकाशित हो चुके हैं।
' विश्वयाग सम्मेलन 1986 ' के अवसर पर इन्हें योगरत्न ' की पदवी स सुशाभित किया गया है।